आपस्तम्बीयं गृह्यसूत्रम्

आपस्तम्बाचार्येण प्रणीतम्

कृष्णयजुर्वेदस्यापस्तम्बीशाखाया
गृह्यकर्मप्रतिपादकम् ॥

भाषावृत्तियुतम्

ब्राह्मणसर्वस्वमासिकपत्रसम्पादकेन
भीमसेनशर्मणा लोकोपकाराय
निर्मितया नागरीभाषया
समन्वितम् ॥

सत्यव्रतशर्मद्विवेदस्य प्रबन्धेन तदीये वेदप्रकाश
नाम्नियन्त्रे मुद्रापयित्वा प्राकाश्यं नीतम् ॥

संवत् १९६१ सन् १९०५

इस सूत्र को देखने वाले लोग निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रक्खें । १—वेद सम्बन्धी सभी ग्रन्थों में प्रथम अटल श्रद्धा और विश्वास होना चाहिये जिस की श्रद्धा ठीक नहीं उस को इन ग्रन्थों से कुछ लाभ होना दुर्लभ है । क्योंकि वेद के मीमांसक जैमिनि आचार्य जी ने ठीक २ वेद का आन्दोलन अवगाहन करके सारांश लिख दिया है कि (चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः) विधि निषेध रूप वेद की प्रेरणा ही धर्म का स्वरूप है । जब अटल श्रद्धा होगी तभी उस द्रष्टा पुरुष को कुछ लाभ इन ग्रन्थों से अवश्य प्रतीत होगा । जैसे उदाहरणार्थ हम दिखाते हैं इस आपस्तम्बीय सूत्र के तृतीयखण्ड के १५ वें सूत्र में लिखा है कि विवाह के समय कन्या वर की परीक्षा करनी चाहिये । गेहूं जौ आदि अनेक बीज, वेदी की मट्टी, खेत का ढेला, गोबर, और मरघट का ढेला इन पांच वस्तुओं को पृथक् २ किसी डिब्बों में छिपा कर रखदेवे जिस से बिना खोले न जान पड़े कि किस में क्या है । फिर इन पांचों को किसी देवमन्दिरादि में घर के कन्या से उठवावे (जिस कन्या के साथ विवाह करना हो उससे उठवावे) यदि अन्नों को उठावे तो सन्तानों की वृद्धि, वेदि की मट्टी से यज्ञादि कर्मकाण्ड की वृद्धि, खेत के ढेला से धनधान्य की वृद्धि, गोबर से पशुओं की वृद्धि, और मरघट की मट्टी से मरण की वृद्धि जाने । हमे अटल विश्वास है कि जैसे कन्यावर की विधि ज्योतिष ग्रन्थों के अनुसार मिलाई जाती है वैसे इस उक्त प्रकार भी कन्या की परीक्षा विश्वास श्रद्धा के साथ की जावे और मरघट का ढेला उठा लावे तो कन्या वर दो में से एक अवश्य मर जावे ।। ऐसी दशा में उस कन्या के साथ विवाह न करे तो विधवा होने की कदापि सम्भावना न रहे इस रीति के चलाने से विधवा होना कम हो जाय पहिली विधवा धीरे २ समाप्त होजायं तो आ० समाजियों को नियोग और विधवा विवाह की प्रतिक्षण लगी चिन्ता भी स-हम में मिट जावे । हमे पूर्ण विश्वास है कि जो पुरुष ठीक श्रद्धापूर्वक इन कामों को सूत्रों में लिखे अनुसार ठीक २ करेगा उन को अवश्य प्रत्यक्ष फल वैसा ही दीख पड़ेगा कि जैसा इन ग्रन्थों में लिखा है । और जिन लोगों को कुतर्कों ने घेर रक्खा है उन के चित्तों को कुतर्क कुछ भी नहीं करने देता । लोक में भी यदि कोई किसी प्यासे से कहे कि अमुकस्थान पर इस २ मार्ग से जाने पर तुम को जल प्राप्त होगा इस पर वह उस के कहने का प्रमाण न

मान कर उस के कथन में कुतर्क निकाला करे तब क्या उसे जल प्राप्त होस-
कता है और क्या प्यास मिट सकती है ? । कदापि नहीं । वैसे ही यहां भी
जानो । इस लिये श्रद्धालु पुरुषों को ऋषि महर्षि आचार्यों के वचनों पर
विश्वास अवश्य करना चाहिये ।

हमारे पाठक महाशय इस बात का भी विशेष ध्यान रक्खें कि इन सूत्र
ग्रन्थों को जब हम ठीक प्रामाणिक मान लेते हैं तब यह सिद्ध ही है कि
जिस देश काल में और जिस रीति से जो काम शास्त्र में जिस के लिये क-
र्त्तव्य कहा है वह उसी देशकाल में उसी रीति से किया हुआ उसी मनुष्य
के लिये उचित धर्म है अन्यथा किया हुआ वही अधर्म हो जाता है । जैसे
अपने शयन स्थान में ऋतुकाल में रात के समय विवाहित स्त्री से गमन क-
रना गृहस्थ के लिये धर्म और गृहस्थ वैसा न करे तो अधर्म है । ब्रह्मचारी
संन्यासी को वैसा करने से अधर्म है तीर्थ यात्रादि देश में वन में प्रातःका-
लादि दिन में गृहस्थ को स्वभार्यागमन में भी अधर्म है । यदि शास्त्राज्ञा न
मानें तो धर्म अधर्म कुछ नहीं बनता । रोना सर्वत्र बुरा समझा जाता है
परन्तु (अन्यत्र त्वदुरुदृश्याः संविशन्तु) इस वेद मंत्र के अनुसार पिता के घर
से पति के घर को जाती हुई कन्या का रोना अच्छा माना जाता है । गाली
देना सर्वत्र बुरा काम है पर विवाह में स्त्रियां तथा पुरुष गालियों को शुभ
मानते हैं । इसीके अनुसार यज्ञादि में पशुओं का आलम्भन भी पूर्वकाल में
बुरा नहीं माना जाता था । परन्तु लोक रीति से अपना मांस बढ़ाने के लिये
शास्त्रविरुद्ध पशुहिंसा अत्यन्त बुरी मानी जाती थी । अब कुछ ऐसा स-
मय आगया है कि शास्त्र में लिखी बातों से तो लोग अधिक चौंकते हैं प-
रन्तु मांसाहारी लोगों के लिये नित्य२हज़ारों गौ आदि पशु मारे जाते हैं
जिस को सभी जानते हैं उन से इतने नहीं घबराते। पर जब ऋषि आचार्यों
ने ऐसा विकराल समय आते देखा तब पहिले से ही (लोकविक्रुष्टमेवच)
लिख गये कि जो धर्म जिस समय लोक में बुरा समझा जावे उस समय वह
कर्त्तव्य नहीं है । इसी लिये पश्वालम्भ कर्म इस समय कर्त्तव्य नहीं है । इस
कारण ऐसे विचार इन ग्रन्थों में देख कर उद्वेग वा संकोच नहीं करना चा-
हिये । देखिये विवाह यज्ञोपवीत की सभी पद्धतियों में (ममव्रतेतेहृदयं०)
मन्त्र से कन्या के हृदय का स्पर्श वर करे ऐसा लिखा है । सो पहिले लोगों

का सिद्धान्त तो (अर्थकामेष्वसक्तानांधर्मज्ञानं विधीयते) के अनुसार था कि धर्म के सामने लोभ और कामासक्ती उन के विचार से पृथक् सूर्य के सामने अन्धकार के तुल्य समूल नष्ट हो जाती थी तब विवाह के समय कन्या के हृदय का स्पर्श करने में कुछ भी संकोच नहीं होता था पर अब ऐसा करने में सभी को संकोच आन पड़ता है सो इस का कारण अन्तःकरण का काम लोभादि से दूब जाना है । वैसे ही पश्वालम्भ में भी अन्तःकरण में शुद्ध धर्म-भाव न रहने से लज्जा भय वा संकोच होता है । इसी लिये हम लोग इन कामों के अधिकारी नहीं रहे ।

सारांश यह है कि हमारे पाठक महाशय किसी कारण इस (पशुसंज्ञपन) कर्म को अपने विचारानुसार सर्वथा अनुचित ही समझें तो भी यह समझलें कि हम से ऐसे कर्म करने कराने का कोई आग्रह भी तो नहीं करता प्रत्युत धर्मशास्त्र मना करता है इस लिये हम को ग्रन्थों में लिखे होने मात्र से द्वेष करना व्यर्थ निष्प्रयोजन है । हम को अपनी इष्टसिद्धि के लिये समयानुसार जो २ बातें इन ग्रन्थों में उपकारी प्रतीत हों उन से लाभ उठाना चाहिये । सब काम सब देश कालों में सब के लिये हितकारी जब कदापि हो ही नहीं सकते तो इन्हीं ग्रन्थों का सब लेख हमारे अनुकूल कैसे हो जावेगा ? । जैसे शीत काल में खसखस की टट्टी व्यर्थ होने पर भी फिर गर्मी आने पर स्वयं सार्थक हो जाती है वा जैसे गर्मी के दिनों में वा गर्म देश में शीत के वस्त्र बोझा मात्र व्यर्थ प्रतीत होने पर भी फिर शीत का देश वा काल आने पर सार्थक उपकारी हो जाते हैं । तथा जैसे पंसारी की दूकान में रक्खा हुआ विष भी कभी किसी अधिकारी के लिये अमृतवत् उपकारी हो जाता है इस लिये उससे द्वेष घृणा वा अरुचि करने वाले की भूल है वैसे ही इन ग्रन्थों के पशुसंज्ञपनादि विषयों से द्वेष वा घृणा कुछ नहीं करना चाहिये ॥

अन्तिम प्रार्थना यह है यह पुस्तक जैसा हमें मिला वैसा ही छपाया है विशेष आन्दोलन नहीं कर पाया इस कारण वा भाषानुवाद में कोई त्रुटि किन्हीं महाशयों को प्रतीत हो तो वे क्षमा करें और हमें सूचनाकर देवें इस का सूचीपत्र और शुद्धि पत्र साथ में लगा है तदनुसार उस २ पृष्ठ पंक्ति में वैसाही शुद्ध कर लेवें इस पर भी कोई अशुद्धि ज्ञात हो तो क्षमा करें ॥

ह० भीमसेन शर्म्मा

सम्पादक ब्रा० स० इटावा—

अथापस्तम्बीयगृह्यसूत्रविषयसूचीपत्रम् ॥

इत्यापस्तम्बीयगृह्यसूचीपत्रम्।

ओ३म्

अथापस्तम्बीयं गृह्यसूत्रम्

अथ कर्माण्याचाराद्यानि गृह्यन्ते ॥ १ ॥ उदगयनपूर्वपक्षाहःपुण्याहेषु कार्याणि ॥ २ ॥ यज्ञोपवीतिना ॥ ३ ॥ प्रदक्षिणम् ॥ ४ ॥ पुरस्तादुदग्वोपक्रमः ॥ ५ ॥ तथाऽपवर्गः ॥ ६ ॥ अपरपक्षे पित्र्याणि ॥ ७ ॥ प्राचीनावीतिना ॥ ८ ॥ प्रसव्यम् ॥ ९ ॥ दक्षिणतोऽपवर्गः ॥ १० ॥ निमित्तावेक्षाणि नैमित्तिकानि ॥ ११ ॥ अग्निमिद्ध्वा प्रागग्रैर्दर्भैरग्निं परिस्तृणाति ॥ १२ ॥ प्रागुदगग्रैर्वा ॥ १३ ॥

भावार्थः-अब श्रौतकर्म दर्श पौर्णमासादि कहने पश्चात् सदाचार सम्बन्धी उपनयन विवाहादि स्मार्तकर्मों का संग्रह यहां करते हैं ॥१॥ उत्तरायण शुक्ल पक्ष ज्योतिः शास्त्रोक्त पुण्य दिन शुभनक्षत्रों में इन कामों को करना चाहिये ॥ २ ॥ यज्ञोपवीत सव्य पहन कर करे ॥ ३ ॥ कुशपरिस्तरणादि काम प्रदक्षिण नाम दहिना हाथ जिस में आगे २ को चले ऐसे करें किन्तु अपनी ओर को न करे। जैसे परिस्तरण ईशानकोण से अग्निकोण तक करे यह प्रदक्षिण है यदि ईशान कोण से वायु कोण की ओर मुख कर चले तो अप्रदक्षिण हो जायगा ॥४॥ वेदि से पूर्व वा उत्तर को पात्रासादनादि का आरम्भ करे ॥ ५ ॥ वैसा ही पूर्व वा उत्तर में उन २ कामों को समाप्त करे ॥ ६ ॥ पितृ सम्बन्धी श्राद्धादि कर्म कृष्णपक्ष में अमावास्या तक करे ॥ ७ ॥ पितृसम्बन्धी काम अपसव्य हो के करने चाहिये ॥८॥ परिस्तरणादि काम श्राद्धादि में अप्रदक्षिण करे ॥९॥ उन को दक्षिण में समाप्त करे ॥ १० ॥ गर्भाधान पुंसवनादि तथा न-वान्नेष्टि आदि नैमित्तिक काम निमित्त शुभ ऋतुकालादि में करे उत्तरायणादि न देखे ॥ ११ ॥ अग्नि को प्रदीप्त करके पूर्व को जिन का अग्रभाग हो ऐसे दर्भों से अग्नि का परिस्तरण करे ॥ १२ ॥ अथवा दक्षिण उत्तर में प्रागग्र और पूर्व पश्चिम में उदगग्र कुशों से परिस्तरण करे ॥ १३ ॥

दक्षिणाग्रैः पित्र्येषु ॥ १४ ॥ दक्षिणाप्रागग्रैर्वा ॥ १५ ॥ उत्तरेणाग्निं दर्भान्संस्तीर्य द्वन्द्वं न्यञ्चि पात्राणि प्रयुनक्ति देवसंयुक्तानि ॥ १६ ॥ सकृदेव मनुष्यसंयुक्तानि ॥ १७ ॥ एकैकशः पितृसंयुक्तानि ॥ १८ ॥ पवित्रयोः संस्कार आयामतः परीमाणं प्रोक्षणीसंस्कारः पात्रप्रोक्षणमिति दर्शपूर्णमासवत्तूष्णीम् ॥ १९ ॥ अपरेणाग्निं पवित्रान्तर्हिते पात्रेऽप आनीयोदगग्राभ्यां पवित्राभ्यां त्रिरुत्पूय समं प्राणैर्हृत्वोत्तरेणाग्निं दर्भेषु सादयित्वा दर्भैः प्रच्छाद्य ॥ २० ॥

भाषार्थः—पितृ सम्बन्धी कामों में दक्षिण को दाभों का अग्रभाग करके परिस्तरण करे ॥ १४ ॥ अथवा कुण्ड से पश्चिम में दक्षिणाग्र और उत्तर दक्षिण में पूर्वाग्र कुश करे ॥ १५ ॥ अग्निकुण्ड से उत्तर में दर्भ बिछा कर उन पर दो २ औंधे देवताओं सम्बन्धी यज्ञपात्र प्रागग्र वा उदगग्र स्थापन करे ॥ १६ ॥ मनुष्य संस्कार सम्बन्धी विवाह उपनयनादि कामों में शिला घट वस्त्र दण्ड मेखला कृष्णाजिनादि वस्तु अग्नि से उत्तर में एक साथ ही स्थापित करदेवे ॥ १७ ॥ पितृकर्मों में उपयोगी यज्ञपात्रादि एक २ कर स्थापित करे ॥ १८ ॥ दो पवित्रों का संस्कार लम्बाई का परिमाण प्रादेश मात्र होना, प्रोक्षणी संस्कार (पवित्र जिस में धरे हों ऐसी अग्निहोत्र हवणी नाम प्रोक्षणी पात्र में प्रणीतापात्र से जल गिराना इत्यादि) तथा पात्र प्रोक्षण इन चार कामों को श्रौत दर्श पौर्णमास के तुल्य यहां भी करे । परन्तु श्रौत में ये काम समन्त्रक होते हैं यहां तूष्णीं बिना मन्त्र पढ़े करे ॥ १९ ॥ पात्र प्रोक्षण पर्यन्त कर्म कर के पश्चात् अग्निकुण्ड से पश्चिम में पवित्र जिस में धरे हों ऐसे प्रणीता पात्र में शुद्ध जल लाकर उत्तर को जिन का अग्रभाग हो ऐसे पवित्रों से तीन बार उत्पवन करके वाम हाथ पर प्रणीता को धर दहिने हाथ से साधे हुये नासिका पर्यन्त ऊपर को उठा के अग्निकुण्ड से उत्तर में कुशों पर रख के प्रणीता जल के ऊपर भी कुशों से आच्छादन कर देवे ॥ २० ॥

ब्राह्मणं दक्षिणतो दर्भेषु निषाद्य ॥२१॥ आज्यं विलाप्यापरेणाग्निं पवित्रान्तर्हितायामाज्यस्थाल्यामाज्यं निरुप्योदीचोऽङ्गारान्निरूह्य तेष्वधिश्रित्य ज्वलताऽवद्युत्य द्वे दर्भाग्रे प्रत्यस्य त्रिः पर्यग्नि कृत्वोदगुद्वास्याङ्गारान्प्रत्यूह्योदगग्राभ्यां पवित्राभ्यां पुनराहारं त्रिरुत्पूय पवित्रे अनुप्रहृत्य ॥ २२ ॥

इति प्रथमः खण्डः ॥

येन जुहोति तदग्नौ प्रतितप्य दर्भैः संमृज्य पुनः प्रतितप्य प्रोक्ष्य निधाय दर्भानद्भिः संस्पृश्याग्नौ प्रहरति ॥ १ ॥ शम्यापरिध्यर्थं विवाहोपनयनसमावर्तनसीमन्तचौलगोदान

भाषार्थः—अग्नि से दक्षिण में ब्रह्मा का आसन बिछाके उसपर प्रागग्र कुशा बिछाके उस पर ब्राह्मण ब्रह्मा का वरण करके बैठावे ॥२१॥ घी को पिघला कर अग्निकुण्ड से पश्चिम में कुश पवित्र जिस में रक्खे हों ऐसी आज्यस्थाली में घृतपात्र से घी गिरा के अग्निकुण्ड से उत्तर (देवपितृ सब कर्मों में) में अङ्गारों को खैंचकर उन पर आज्यस्थाली धर के घी तपावे सूखे कुश वा अन्य तृण जलाकर घी के ऊपर फिरावे फिर दो दाभों के अग्रभाग पवित्रवत् लेके घी में छोड़े पश्चात् तृण जलाके घी के सब ओर प्रदक्षिण तीन वार फिरावे फिर घी को अङ्गारों से उत्तर की ओर उतार के अंगारों को फिर कुण्ड में गिरा कर उदगग्र पवित्रों से तीन वार ऊपर को उत्पवन करके पवित्र अग्नि में छोड़ देवे ये पवित्र द्वितीय घी के ही लिये थे ॥२२॥ सूत्र में कहा कर्म आघारसंस्कार कहाता है। यह प्रथम खण्ड समाप्त हुआ॥

भाषार्थः—स्रुव जुहू कर्छी वा हाथ जिस से होम कर्त्ता हो उस को प्रथम अग्नि में तपा के दाभों से पोंछ कर फिर तपा के फिर पवित्रों से प्रोक्षण करके अग्नि से दक्षिण में धर के जल से स्पर्श करके संमार्जन कुशों को अग्नि में छोड़ देवे ॥१॥ विवाह उपनयन समावर्त्तन सीमन्त चूडाकर्म गोदान और अद्भुत प्रायश्चित्त कर्मों में परिधि (श्रौतस्मार्त्त कर्मों में अग्निकुण्ड के तीन ओर रखने की तीन लकड़ी यज्ञिय वृक्षों की होती हैं जिन को परिधि कहते

प्रायश्चित्तेषु॥२॥अग्निं परिषिञ्चत्यदितेऽनुमन्यस्वेति दक्षिणतः प्राचीनमनुमतेऽनुमन्यस्वेति पश्चादुदीचीनं सरस्वतेऽनुमन्यस्वेत्युत्तरतः प्राचीनं देवसवितः प्रसुवेति समन्तम्॥३॥पैतृकेषु समन्तमेवतूष्णीम्॥४॥ इध्ममाधायाघारावाघारयति दर्शपूर्णमासवत्तूष्णीम्॥५॥अथाज्यभागौ जुहोत्यग्नयेस्वाहेत्युत्तरार्धपूर्वार्द्धे सोमायस्वाहेति दक्षिणार्धपूर्वार्धे समंपूर्वेण॥६॥ यथोपदेशं प्रधानाहुतीर्हुत्वा जयाभ्यातानान्राष्ट्रभृतः प्राजापत्यां व्याहृतीर्विहृताः सौविष्टकृतीमित्युपजुहोति। यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्वान् सर्वंस्विष्टंसुहुतंकरोतुस्वाहेति॥ ७॥

हैं) के स्थान में शम्या अर्थात् हलके जुआं में जो लकड़ी होती है जिस को सैल कहते हैं उन तीन को लेवे॥२॥ अग्निकुण्ड के सब ओर निम्न प्रकार से प्रोक्षणी का जल सेचन करे (अदितेऽनुमन्यस्व) मन्त्र से कुण्ड के दक्षिण में पश्चिम से पूर्व को(अनुमतेऽनुमन्यस्व) मन्त्र से कुण्ड के पश्चिम में दक्षिण से उत्तर को (सरस्वतेऽनुमन्यस्व) कुण्ड के उत्तर में पश्चिम से पूर्व को तथा (देवसवित प्रसुव०) मन्त्र से सब ओर जल सेचन करे॥ ३॥ पितृ कर्मों में विना मन्त्र तूष्णीं वेदि के सब ओर अप्रदक्षिण जल सेचन करे॥ ४॥ इध्म नाम तीन समिधा पलाश की तूष्णीं अग्नि में चढ़ा कर दर्शपूर्णमास श्रौतयज्ञ में लिखे अनुसार दीर्घ संतत धार बांध कर प्रजापति और इन्द्र देवता का ध्यान करता हुआ दो आहुति तूष्णीं देवे॥५॥ इस के अनन्तर आज्यभागको दो आहुति देवे (अग्नये स्वाहा) मन्त्र से कुण्ड के उत्तर पूर्वार्ध देश ईशानकोण में और (सोमाय स्वाहा) मन्त्र से कुण्ड के दक्षिणार्ध पूर्वार्ध नाम आग्नेय कोण में आहुति देवे॥६॥जिस २ संस्कारादि कर्ममें जिन२ प्रधानाहुतियों का उपदेश आचार्यों ने किया है उन का उसी प्रकार उन्हीं मन्त्रोंसे होम करके पश्चात् जया नामक (चित्तञ्च स्वाहा) इत्यादि १३ (अग्निर्भूतानां०) इत्यादि अभ्यातान संज्ञक १८ और (ऋताषाड्०) इत्यादि २२ राष्ट्रभृत (प्रजापतेनत्वदेतान्य०) यह १ प्राजापत्या तथा तीन व्याहृति पृथक् २ और (यदस्यकर्मणो०) ऋचा से एक स्विष्टकृत् इन से सब संस्कारादि में सामान्य होम करे॥ ७॥

पूर्ववत्परिषेचनमन्वमंस्थाः प्रासावीरिति मन्त्रसंनामः ॥८॥ लौकिकानां पाकयज्ञशब्दः ॥९॥ तत्र ब्राह्मणावेक्षो विधिः ॥१०॥ द्विर्जुहोति द्विर्निमार्ष्टि द्विःप्राश्नात्युत्सृप्याचामति निर्लेढीति ॥११॥ सर्वऋतवो विवाहस्य शैशिरौ मासौ परिहाप्योत्तमं च नैदाघम् ॥१२॥ सर्वाणि पुण्योक्तानि नक्षत्राणि ॥१३॥ तथा मङ्गलानि ॥१४॥ आवृतश्चास्त्रीभ्यः प्रतीयेरन् ॥१५॥ इन्वकाभिः प्रसृज्यन्ते ते वराः प्रतिनन्दिताः ॥१६॥

इति द्वितीयः खण्डः

इस के पश्चात् अग्निकुण्ड के सब ओर (अदितेऽनुमन्यस्व) इत्यादि मन्त्रों से पूर्वोक्त प्रकार से जल सेचन करे (देवसवितः प्रसुव०) के स्थान में (देवसवितः प्रासावीः०) ऐसा ऊह करे ॥ ८ ॥ लौकिक नाम गृह्यसूत्रोक्त वा स्मार्त विवाहादि कर्म पाकयज्ञ कहाते हैं ॥ ९ ॥ इन पाकयज्ञों में ब्राह्मण नाम एक ब्रह्मा ऋत्विज् ही मुख्य कर वरण किया हुआ सब विधि को देखता है ॥ १० ॥ अग्निहोत्र में दो आहुति होती हैं वैसे यहां प्रधान तथा स्विष्टकृत् दो होती हैं। दो बार लेप मार्जन दोनों में दो बार प्राशन पृथक् जाकर यहां आचमन वहां तीसरा प्राशन दो बार स्रुच् से निर्लेहन करना इत्यादि अग्निहोत्र के तुल्य यहां भी जानो ॥ ११ ॥ यहां तक सामान्य विधि कहा। अब विवाह का प्रकरण कहते हैं। माघ फाल्गुन और आषाढ़ तीन महीनों को छोड़ कर विवाह सब महीनों में हो सकता है ॥ १२ ॥ ज्योतिःशास्त्र में कहे सब पुण्य नक्षत्र और पुण्य तिथि वार विवाह के लिये जानो ॥ १३ ॥ स्वस्तिपुण्याहवाचन आभ्युदयिक श्राद्ध गणेश गौरी पूजन गीत वादित्रादि सब माङ्गलिक कर्म विवाह में जानो ॥१४॥ अमन्त्रक क्रिया स्त्रियों तक जानो स्त्रियों के देवपूजादि अनेक काम अमन्त्रक विवाहादि में होते हैं ॥ १५ ॥ इन्वका नाम मृगशिरस् नक्षत्र से जिन की वरेच्छा (सगाई) लड़की वाले करते वे वर आनन्दित होते हैं ॥ यह द्वितीय खंड पूरा हुआ ॥

मघाभिर्गावो गृह्यन्ते ॥ १ ॥ फल्गुनीभ्यां व्यूह्यते ॥ २ ॥ यां कामयेत दुहितरं प्रिया स्यादिति तां निष्ठ्यायां दद्यात्प्रियैव भवति नैव तु पुनरागच्छतीति ब्राह्मणावेक्षो विधिः ॥ ३ ॥ इन्वकाशब्दो मृगशिरसि निष्ट्याशब्दः स्वातौ ॥ ४ ॥ विवाहे गौः ॥ ५ ॥ गृहेषु गौः ॥ ६ ॥ तया वरमतिथिवदर्हयेत् ॥ ७ ॥ योऽस्यापचितस्तमितरया ॥ ८ ॥ एतावद्गोरालम्भस्थानमतिथिः पितरो विवाहश्च ॥ ९ ॥ सुप्तां रुदतीं निष्क्रान्तां वरणे परिवर्जयेत् ॥ १० ॥

भाषार्थः—आर्षविवाह में कन्याके पितादिको एक गौ एक बैल वा दो गौ दो बैल देने के लिये किन्हीं आचार्यों का मत है (जिस का मनु ३ । ५३ में निषेध किया है) सो आर्ष विवाह में कन्या वालों को देने के लिये यदि गौ मिथुन किसी से उस के घर से पति के घर लाने के लिये कैसे ही लेनें पड़ें तो मघा नक्षत्र में लेना चाहिये अर्थात् आर्ष विवाह भी मघा नक्षत्र में करना चाहिये ॥ १ ॥ सैनावयह के लिये तथा आर्ष विवाह की वधू को उस के घर से पति के घर लाने के लिये पूर्वा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र श्रेष्ठ हैं ॥ २ ॥ जिस पुत्री को पिता चाहता हो कि यह अपने पति को प्यारी हो उस का विवाह स्वाति नक्षत्र में करे तो प्यारी ही होती है । वह कन्या रोग दरिद्रतादि दुःखों से पीड़ित होके सहायतार्थ पिता के घर फिर नहीं आती उस के सब मनोरथ वहीं पूरे होजाते हैं । यह ब्राह्मण में देखा विधान है ॥ ३ ॥ इन्वका नाम मृगशिरा का और निष्ट्या नाम स्वाति नक्षत्र का है ॥ ४ ॥ विवाह के मधुपर्क में गौ के आलम्भन का जब विधान है (पर यह काम कलियुग में वर्जित है) ॥ ५ ॥ तब घर में अन्य गौ रखनी चाहिये ॥ ६ ॥ जो विवाह में गौ कही है उस से अतिथि के तुल्य वर का पूजन करे (कलिमें अतिथि तथा वर आदि का पूजन गौ के दधि दुग्धादि विकार से होना चाहिये गौ के दुग्धादि में गोधन अवश्य रहता है) ॥ ७ ॥ जो इस वर का पूज्य गुरु वर के साथ आवे उस का पूजन घर वाली ६ सूत्रोक्त गौ से करना चाहिये ॥ ८ ॥ अतिथि पितर और विवाह ये तीन ही स्थानों में गौ के आलम्भ के अवसर हैं ॥ ९ ॥ सोती रोती और घर से निकलती हुई कन्या से विवाह न करे ॥१०॥

दत्तांगुप्तां द्योतामृषभां शरभां विनतां विकटां मुण्डां मण्डूषिकां सांकारिकां रातां पालीं मित्रां स्वनुजां वर्षकारीं वर्जयेत्॥११॥नक्षत्रनामा नदीनाम्ना वृक्षनाम्नाश्च गर्हिताः ॥१२॥ सर्वाश्च रेफलकारोपान्ता वरणे परिवर्जयेत् ॥ १३ ॥ शक्तिविषये द्रव्याणि प्रतिच्छन्नान्युपनिधाय ब्रूयादुपस्पृशेति॥१४॥ नानाबीजानि संसृष्टानि वेद्याः पांसून् क्षेत्राल्लोष्टं शकृ-

---

भावार्थः—अन्य को दान दी हुई अन्य के साथ विवाहित, छिपी हुई जिस को देख दिखान ले अर्थात् पिलचि अशुभ लक्षणों के कारण जिस को गुप्त रखते हों। द्योता, मैंढी—विषम दृष्टिवाली, ऋषभ नाम वृषभ के स्वभाववाली, शरभा— अति सुन्दरी (क्योंकि ऐसी स्त्री को जार लोग विशेष चाहते हैं) विनता—टेढ़े शरीर वाली, विकटा—फैली जांघों वाली, मुण्डा—केश जिस के मुण्डे हों, मण्डूषिका—कठोर अथवा मंडूक की सी त्वचा वाली वा बौनी। सांकारिका—अन्य कुलकी पैदा हुई अन्य ने पाली अथवा जिस के गर्भ में होने पर माता ने अस्थि संचयन किया हो। राता—नाम अति कामिनी खिलाड़िन वा रतिशील, पाली—नाम पशुओं को पालने वाली, मित्रा बहुतों से मेल मित्रता करने वाली, स्वनुजा—जिसकी छोटी बहिन बहुत दर्शनीय हो, वर्षकारी नियत समय कम गर्भ में रहकर पैदा हुई हो वा वर से एक वर्ष अधिक हो वा वर जिस वर्ष पैदा हुआ उसी वर्ष में पैदा हुई हो इन पन्द्रह प्रकार की कन्याओं से विवाह न करे ॥ ११ ॥ कृत्तिका रोहिणी चित्रा आदि नक्षत्र नामों वाली, गंगा यमुना आदि नदी नामों वाली तथा बदरी शिंशपा आदि वृक्ष नामों वाली कन्याओं से भी विवाह न करे ॥१२॥ र तथा ल अक्षर जिन के नाम के अन्त में हों जैसे गौरी शाली तथा सगोत्रा समान प्रवरा पुंश्चली दुःशीला इत्यादि कन्याओं से भी विवाह न करे १३ शक्ति नाम घर वा कुटुम्ब के लोगों की सम्मति हो तो आगे लिखे पांच वस्तु के भीतर छिपा कर पांच गोला बनावे उन को एक जगह धर के वर कन्या से कहे कि इन में से एक उठाले ॥ १४ ॥ धान जौ गेहूं आदि मिले हुये अनेक अन्न, वेदी की धूली खेत का ढेला गोबर और श्मशान की मट्टी इन

कूमश्मानलोष्टमिति ॥१५॥ पूर्वेषामुपस्पर्शने यथालिङ्गमृद्धिः ॥ १६ ॥ उत्तमं परिचक्षते ॥ १७ ॥ बन्धुशीललक्षणसंपन्नामरोगामुपयच्छेत ॥१८॥ बन्धुशीललक्षणसंपन्नः श्रुतवानरोगइति वरसंम्पत् ॥१९॥ यस्यां मनश्चक्षुषोर्निबन्धस्तस्यामृद्धिर्नेतरदाद्रियेतेत्येके ॥ २० ॥ इतितृतीयःखण्डः

प्रथमःपटलश्चसमाप्तः ॥

सुहृदः समवेतान् मन्त्रवतो वरान्प्रहिणुयात् ॥ १ ॥ तानादितो द्वाभ्यामभिमन्त्रयेत ॥ २ ॥ स्वयं दृष्ट्वा तृतीयां

पांचों को छिपा के उठवावे ॥ १५ ॥ इन के उठाने में अन्न का ढेला उठावे तो सन्तानों की वृद्धि, वेदि की मट्टी से यज्ञादि कर्मकाण्ड की वृद्धि, खेत के ढेला से धनधान्य की वृद्धि, गोवर से पशुओं की वृद्धि, और मरघट की मट्टी से मरण की वृद्धि, जाने ॥ १६ ॥ उत्तम नाम अन्त्य के मरघट के ढेला के उठाने को आचार्य लोग बुरा कहते हैं उस से वर कन्या दोनों वा किसी एक का मरण अवश्य होगा ॥ १७ ॥ भाई आदि कुल वाली अच्छे शीलस्वभाव वाली और हाथ की रेखादि चिह्न जिस के अच्छे हों [पतञ्जलि महर्षि के महाभाष्य के लेखानुसार (पतिघ्नीपाणिरेखा) आदि न हो,] तथा क्षयीतवेदिक मृगी आदि असाध्य रोग वाली न हो ऐसी कन्या से विवाह करे ॥ १८ ॥ कुलीन सुशील शुभ लक्षणों वाला वेदशास्त्र का विद्वान् निरोग ये वर के शुभ लक्षण जाने ॥ १९ ॥ जिस कन्या से वर का मन और चक्षु लगजावे ठीक सन्तुष्ट हो जावे उस से विवाह करना अच्छा है किन्तु पूर्वोक्त दत्ता आदि के गुण दोषों का विशेष आदर न करे यह किन्हीं आचार्यों का मत है । यह तीसरा खण्ड और पहिला पटल समाप्त हुआ ॥

भा० अपने से प्रेम और अपने कामों में मेल मिलाप रखने वाले वेदपाठी ब्राह्मणों को वर कन्या के स्वीकारार्थ कन्या के कुल में भेजे ॥ १ ॥ उन जाते हुए मित्र ब्राह्मणों को देखता हुआ वर (१ प्रसुग्मन्त०) इत्यादि दो मन्त्र पढ़े ॥ २ ॥ फिर विवाह के निश्चित होजाने पर विवाह से पहिले दिन नान्दी श्राद्ध करके अगले दिन ब्राह्मणों को भोजन और स्वस्ति पुण्याहवाचन कराके वर वधू के घर जावे उस को कन्या का पिता आसन

जपेत् ॥ ३ ॥ चतुर्थ्या समीक्षेत ॥ ४ ॥ अङ्गुष्ठेनोपमध्यमया
चाङ्गुल्या दर्भं संगृह्योत्तरेण यजुषा तस्या भ्रुवोरन्तरं संमृज्य
प्रतीचीनं निरस्येत् ॥ ५ ॥ प्राप्ते निमित्त उत्तरां जपेत् ॥६॥
युग्मान्समवेतान्मन्त्रवत उत्तरयाद्भ्यः प्रहिणुयात् ॥ ७ ॥
उत्तरेण यजुषा तस्याः शिरसि दर्भेण्ड्वं निधाय तस्मिन्नु
त्तरया दक्षिणं युगच्छिद्रं प्रतिष्ठाप्य छिद्रे सुवर्णमुत्तरया
न्तर्धायोत्तराभिः पञ्चभिः स्नापयित्वोत्तरयाऽहतेन वाससा
च्छाद्योत्तरया योक्त्रेण संनह्यति॥ ८॥ अथैनामुत्तरया दक्षिणे

आदि मधुपर्क पर्यन्त विधिवत् देके कन्यादान देवे तब वर उस कन्या को
स्वयं देखकर तीसरी ऋचा (अभ्रातृघ्नीम्०) इत्यादि को जपे ॥३॥ (अघोरच-
क्षु०) इस चौथी ऋचा से वधू के मुख को वर देखे ॥४॥ अंगुष्ठ और अनामिका
अङ्गुली से कुश पकड़के (इदमहं०) इस मन्त्र से वर वधू के दो भ्रू-भौं के बीच
को शुद्ध करके शिर के ऊपर२ से पश्चिम को कुश फेंक देवे ॥५॥ वधू वा उस के कु-
टुम्बियों में कोई रोदनका निमित्त विघ्न हो तो (जीवांरुदन्ति०) इत्यादि
ऋचा का जप करे ॥६॥ और (व्युत्क्रूरं०) इस ऋचा को पढ़ के ४।६ आदि सम
संख्यावाले मन्त्र पढे ब्राह्मणों को एक साथ जललाने के लिये भेजे ॥७॥ फिर उन
लोगों के जल ले आने पर (दर्भेण्डुवम्) दाभों से बनाये मण्डल को [शिरपर
घड़ा धरने के लिये जैसी इंडुरी बनती है उसी प्रकार मण्डलाकार दर्भेण्डुव हो
ता है] (अर्यम्णोऽग्निम्०) मन्त्र पढ के वधू के शिर पर धर कर उस दर्भ
मण्डल पर अगली (खेनस०) इस ऋचा से दहिना धुर के बाहिरी छिद्र को प्र-
तिष्ठित कर उस छिद्र में भीतर (शन्तेहिरण्यं०) इस अगली ऋचा से सुवर्ण
रखके फिर उस पूर्वलाये जलद्वारा (हिरण्यवर्णा०) इत्यादि पांच मन्त्रों से प्रत्ये-
क मन्त्र पूर्वक वधू को स्नान कराकर [अर्थात् कुश मण्डल्य जिस छिद्र में
सुवर्ण धरा है उसी छिद्र द्वारा जल छोड़ता हुआ बहूको स्नान करावे]
तत्पश्चात् (परित्वागिर्वणोगिर०) इस ऋचा को पढ़ के दोनों ओर चीरेदार
नयी सजी साड़ी बहू को वर स्वयं मन्त्र पढ़के पहनावे पश्चात् बहू को

हस्ते गृहीत्वाग्निमभ्यानीयापरेणाग्निमुदगग्रं कटमास्तीर्य तस्मिन्नुपविशतउत्तरो वरः ॥ ९ ॥ अग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्तेऽथैनामादितो द्वाभ्यामभिमन्त्रयेत ॥ १० ॥ अथास्यै दक्षिणेन नीचाहस्तेन दक्षिणमुत्तानं हस्तं गृह्णीयात् ॥ ११ ॥ यदि कामयेत स्त्रीरेव जनयेयमित्यङ्गुलीरेव गृह्णीयात् ॥ १२ ॥ यदि कामयेत पुंसएव जनयेयमित्यङ्गुष्ठमेव ॥ १३ ॥ सोभीवाङ्गुष्ठमभीव लोमानि गृह्णाति ॥ १४ ॥ गृह्णामि तइत्येताभिश्चतसृभिः ॥ १५ ॥ अथैनामुत्तरेणाग्निं

आचमन कराके (आशासाना सौमनसं०) मन्त्र पढ़ के योक्त्रनामक रस्सी द्वारा ऊपर को घोंटू करके बैठी बहू को कटिभाग में बांधे दर्शपौर्णमासादि के तुल्य यह पत्नी की दीक्षा है ॥ ८॥ अनन्तर वर बहू का दहिना हाथ पकड़ कर (पूषा त्वेत०) इस ऋचा को पढ़ता हुआ अग्नि के संमुख मण्डप में बहू को लाकर अग्निकुण्ड से पश्चिम में उत्तर को अग्रभाग कर आसनरूप चटाई बिछाके उस पर वधू वर एक साथ पूर्वाभिमुख अग्नि के संमुख बैठें उत्तर में वर तथा दक्षिण में बहू रहे ॥ ९॥ इस के पश्चात् पटल १ खं० १ सू० १२ वें में कहे अग्नि प्रदीपन से लेकर खं० २ के ६ सूत्रस्थ आज्यभाग पर्यन्त कर्म करके अनन्तर वर खड़ा हो के (सोमः प्रथमो०) इत्यादि अनुवाक के आदि के दो मन्त्र पढ़ के बैठी बहू का अभिमन्त्रण करे अर्थात् बहू को देखता हुआ मन्त्र पढ़ के संबोधित करे ॥ १० ॥ अनन्तर वर अपने दहिने हाथ को बहू के हाथ से नीचे रख के उस से बहू के उत्तान दहिने हाथ को अङ्गुष्ठ अङ्गुलियों सहित पकड़े ॥ ११ ॥ यदि वर चाहता हो कि केवल कन्या ही पैदा हों तो बहू की अङ्गुलियां ही पकड़े ॥ १२ ॥ यदि चाहे कि केवल पुत्र ही उत्पन्न हों तो केवल अंगूठा ही पकड़े । यदि चाहे कि कन्या पुत्र दोनों हों तो अङ्गुष्ठ अंगुलियों सहित हाथ को पकड़े ॥१३॥ जो पुरुष पाणिग्रहण में किसी सन्तान की कामना न रखता हो वह अंगुष्ठ का थोड़ा ग्रहण और हाथ के लोमों का स्पर्श हो ऐसी रीति से बहू का थोड़ा हाथ पकड़े ॥१४॥(गृह्णामि ते सौभग०)इत्यादि चार मन्त्र पढ़ता हुआ एक वार बहू का दहिना हाथ पकड़े प्रति मन्त्र नहीं ॥१५॥

दक्षिणेन पदा प्राचीमुदीचीं वा दिशमभिप्रक्रमयत्येकमिषइति ॥१६॥ सखेति सप्तमे पदे जपति ॥१७॥ इतिचतुर्थःखण्डः॥

प्राग्घोमात्प्रदक्षिणमग्निं कृत्वा ॥ १ ॥ यथास्थानमुपविश्यान्वारब्धायामुत्तरा आहुतीर्जुहोति सोमाय जनविदे स्वाहेत्येतैः प्रतिमन्त्रम् ॥ २ ॥ अथैनामुत्तरेणाग्निं दक्षिणेन पदाऽश्मानमास्थापयत्यातिष्ठेति ॥ ३ ॥ अथाऽस्या अञ्जलावुपस्तीर्य द्विर्लाजानोप्याभिघारयति ॥ ४ ॥ तस्याः सोदर्यो लाजानावपतीत्येके ॥ ५ ॥ जुहोतीयं नारीति ॥ ६ ॥ उत्तराभिस्तिसृभिः प्रदक्षिणमग्निं कृत्वाऽश्मा-

इस के पश्चात् अग्नि से उत्तर में इस वधू को दहिने पग से उत्तर वा पूर्वदिशा की ओर (एकमिषे०) इत्यादि सात मन्त्रों से सात पग चलावे ॥१६॥ सातवां पग धरने पर (सखासप्तपदाभव०) इत्यादि मन्त्र का जप करे ॥१७॥ यह चौथा खण्ड समाप्त हुआ ॥

भा०—होम से पहिले कहे मन्त्रों द्वारा वधूके सहित वर अग्नि की प्रदक्षिण करे अर्थात् अग्नि प्रदक्षिणा के समय अपने के मन्त्र होम से पहिले २ हैं और वधू को दहिने हाथ में पकड़ के प्रदक्षिणा करना चाहिये ॥ १ ॥ तत्पश्चात् दोनों अपने २ स्थान पर पूर्ववत् बैठकर वधू के अन्वारम्भकरने पर (सोमाय जनविदे स्वाहा) इत्यादि १६ सोलह प्रधान आहुति का होम वर प्रति मन्त्र करे ॥ २ ॥ अनन्तर अग्नि से उत्तर में पत्थर धरके उस पर (आतिष्ठ०) इस मन्त्र को पढ़के दहिने पग से वधू को वर खड़ा करे ॥३॥ अनन्तर वधू की अंजलि में स्रुवा से घृत लगा के उस अंजलि में दो वार कर लाजा (धानकी खीलें) गिरा के ऊपर से खीलों में घी छोड़े ॥ ४ ॥ किन्हीं का मत है कि वधू का सहोदर भाई अंजलि में लाजा छोड़े ॥ ५ ॥ पश्चात् (इयं नारि०) मन्त्र पढ़ के वर कन्या की अंजलि को अपने दहिने हाथ से पकड़ के होम करावे । होमकर्त्ता वर ही माना जायगा कन्या की अंजलि पात्रस्थानी जानो ॥ ६ ॥ फिर (तुभ्यमग्ने पर्य-

नमारथापयति यथा पुरस्तात् ॥ ७ ॥ होमश्चोत्तरया ॥ ८ ॥ पुनःपरिक्रमणमास्थापनं होमश्चोत्तरया ॥ ९ ॥ पुनः परिक्रमणम् ॥ १० ॥ जयादि प्रतिपद्यते ॥ ११ ॥ परिषेचनान्तं कृत्वोत्तराभ्यां योक्त्रं विमुच्य तां ततः प्रवावाहयेत्प्रवाहारयेत् ॥ १२ ॥ समाप्येतमग्निमनुहरन्ति ॥ १३ ॥ नित्यो धार्यः ॥ १४ ॥ अनुगतो मन्थ्यः ॥ १५ ॥ श्रोत्रियागाराद्वाहार्य्यः ॥ १६ ॥ उपवासश्चान्यतरस्य भार्य्यायाः पत्युर्वाऽनुगते ॥ १७ ॥ अपि-

---

वहन्०) इत्यादि तीन ऋचाओं से अग्नि की प्रदक्षिणा करके अर्थात् कन्याका दक्षिना हाथ पकड़ के तीन मन्त्र पढ़े मन्त्र पाठ की समाप्ति में परिक्रमा करके पूर्ववत् फिर वधू का पग शिल पर धरावे और उसी मन्त्र को पढ़े ॥ ७ ॥ पूर्व लिखे अनुसार द्वितीयवार वधू की अंजलि से लाजा होम (अर्यमणं नु-देवं०) इस ऋचा को पढ़के करे ॥ ८ ॥ फिर तीसरी वार उन्हीं तीन ऋचाओं को पढ़ के परिक्रमा करके अश्मारोहण कराके अगले(अयंना०)मन्त्र से लाजा होम करावे ॥ ९ ॥ फिर चौथी वार केवल प्रदक्षिणा मात्र तीन ऋचा पढ़ के करावे ॥ १० ॥ इस के पश्चात् पटल १ खं० २ सू० ७ में कहा जयादि होम करे ॥ ११ ॥ पटल १ खं० २ सू० ८ में कहा परिषेचन पर्यन्त और प्रणीताविमोक करके (प्रत्वा मुञ्चामि) इत्यादि दो मन्त्रों को पढ़ के पत्नी के कटि भाग में बांधे योक्त्रका विमोचन करे उस के पश्चात् वधू को (प्रवाहयेत्) नाम रथादि के द्वारा अपने घर को लावे अथवा (प्रहारयेत्) पीनस पाल की द्वारा अपने घर को लावे ॥ १२ ॥ विवाह के इस अग्नि को मट्टी की कोरी हंडी में भरके वरकन्या के पीछे २ अन्य लोग ले चलें ॥ १३ ॥ पञ्चमहायज्ञादि कर्म करने के लिये इस अग्नि को गृहस्थ द्विज नित्य जीवनपर्यन्त धारण करें ॥ १४ ॥ यदि कभी अग्नि बुत जावे तो अरणीद्वारा मन्थन कर तत्काल फिर से रख लेवें । इस पक्ष में विवाह के समय भी मन्थन करके अरणी से अग्नि निकाले ॥ १५ ॥ अथवा वेदपाठी स्वधर्म कर्म कर्त्ता ब्राह्मण के घर से अपना अग्नि बुत जाने पर अग्नि लाके रक्खे । इस पक्ष में विवाह के समय भी श्रोत्रिय के घर से ही अग्नि लावे ॥ १६ ॥ अग्नि के बुत जाने पर प्रायश्चित्त के लिये पति

चोत्तरया जुहुयान्नोपवसेत् ॥ १८ ॥ उत्तरारथस्योत्तम्भनी ॥ १९ ॥ वाहावुत्तराभ्यां युनक्ति ॥ २० ॥ दक्षिणमग्रे ॥ २१ ॥ आरोहतीमुत्तराभिरभिमन्त्रयते ॥ २२ ॥ सूत्रे वर्त्मनोर्व्यवस्तृणात्युत्तरयानीलं दक्षिणस्यां लोहितमुत्तरस्याम् ॥ २३ ॥ ते उत्तराभिरभियाति ॥ २४ ॥ तीर्थस्थाणुचतुष्पथव्यतिक्रमे चोत्तरां जपेत् ॥ २५ ॥ इति पञ्चमः खण्डः ॥

पत्नी दोनों वा दो में से कोई एक दिन रात उपवास करें। पत्नीगर्भिणी वा रजस्वला हो वा पतिको कोई रोगादि हो इस कारण दो में से किसी एक का विकल्प कहा है इस से कुछ विशेष कारण न हो तो दोनों ही उपवास करें ॥ १७ ॥ अथवा उपवास कोई न करे किन्तु प्रायश्चित्त के लिये (अयाश्चाग्नेऽ०) इस ऋचा से एक आहुति दे देवे ॥ १८ ॥ अगली (सत्येनोत्तभिता०) ऋचा से बैलों के कंधों पर जोड़ने के लिये रथ को उठावे ॥ १९ ॥ (यु ञ्जन्तिब्रध्नं० । योगे योगे०) इन दो ऋचाओं से बैल वा घोड़े (जो रथ में जोड़ने को नियत हों) रथ में जोड़े ॥ २० ॥ पहिले मन्त्र से दहिनी ओर के बैल वा घोड़े को पहिले जोड़े द्वितीय मन्त्र से वायें को पीछे से जोड़े ॥२१॥ जब वधू रथ पर चढ़ना आरम्भ करे तभी वर (सुकिंशुकं०) इत्यादि चार ऋचाओं द्वारा वधू का अभिमन्त्रण करे अर्थात् वधू की ओर देखता हुआ मन्त्र पढ़े । यदि पत्नी को रथ में न लावे किन्तु घोड़े पर चढ़ा के लावे वा पालकी पीनस में लावे तो घोड़े आदि पर चढ़ते समय (उदुत्तर०) इत्यादि तीन मन्त्र वधू को देखता हुआ वर पढ़े ॥ २२ ॥ १ नीला और १ लाल ऐसे सूत के दो डोरा लेकर (नीललोहिते०) इस ऋचा को पढ़ के रथ चलने के रास्ते पर लम्बा बिछा देवे उन में नील को दहिनी लीक पर और वाईं लीक पर लाल सूत बिछावे ॥ २३ ॥ अगली (येवध्वश्चन्द्रम्०) इत्यादि तीन ऋचाओं को पढ़ के उन मार्ग में बिछाये सूत्रों पर रथ के पहिये चलावे ॥ २४ ॥ तीर्थ नाम पुण्य नदी आदि गौओं के खुजलाने को गाड़ा खम्भादि और चौराहे का उल्लंघन करते समय वर (तामन्दसाना०) इस ऋचा का जप करे ॥ २५ ॥ यह पांचवा खण्ड समाप्त हुआ ॥ ५ ॥

नावमुत्तरयाऽनुमन्त्रयते ॥ १ ॥ न च नाव्यांस्तरती वधूः पश्येत् ॥ २ ॥ तीर्त्वोत्तरां जपेत् ॥ ३ ॥ श्मशानाधि व्यतिक्रमे भाण्डे रथे वा रिष्टेऽग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्तेऽन्वारब्धायामुत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादि प्रतिपद्यते परिषेचनान्तं करोति ॥ ४ ॥ क्षीरिणामन्येषां वा लक्षण्यानां वृक्षाणां नदीनां धन्वनां च व्यतिक्रम उत्तरे यथालिङ्गं जपेत् ॥ ५ ॥ गृहानुत्तरया संकाशयति ॥६॥ वाहावुत्तराभ्यां विमुञ्चति दक्षिणमग्रे ॥ ७ ॥

यदि मार्ग में नदी आवे और बधू को नौका उतरने पड़े तो (अयंनोमह्याःपारंस्वस्ति०) इस ऋचा से नौका का अनुमन्त्रण करे ॥ १ ॥ नदी के पार उतरती हुई बधू नौका को खेने वाले मल्लाहों को न देखे ॥ २ ॥ नदी के पार पहुंचने पर (अस्यपार०) इस ऋचा का वर जप करे ॥ ३ ॥ यदि मार्ग में श्मशान (मघंट) भूमि का उल्लंघन करना पड़े वा कोई भांडा अथवा वधूका आभूषणादि टूट फूट जावे अथवा रथ का कोई अङ्ग टूट जावे तो अग्नि को प्रज्वलित करने से लेकर (प्रथम पटल खं० २ में कहे अनुसार) आज्यभागाहुति पर्यन्त कृत्य करके बधू के अन्वारम्भ करने पर (यदृतेष्चित०) इत्यादि सात आहुति होम करके जयादि (पटल १ खं०२के ७।८सूत्रों में कहा) होम तथा परिषेचन पर्यन्त कर्म करे ॥४॥ (न्यग्रोध) नाम वट आदि दूध वाले वृक्षों वा अन्य चिह्न किये हुए सीमा स्थानी वृक्षों जल सहित वा जलरहित नदियों और जिन में ग्राम के पशु चरनेको न जाते आते हों ऐसे बड़े निर्जन वनों को लांघ कर चलना पड़े तो उस २ वृक्षादि के नाम वाली ऋचा पढ़े जैसे वृक्षों के अतिक्रमण में (येगन्धर्वा०) नदी के अतिक्रमण में (पाञ्चोदधय०) और वन के अतिक्रमण में (यानिधन्वनानि०) पढ़े ॥५॥ फिर वरके घरमें पहुंच कर बधूको रथ से उतार कर दहेज का धन वस्त्रादि घर में पहुंचा कर सब घर बधू को दिखावे ॥६॥ फिर (आवामगन्०। अयंनो देवः सविता०) इन दो ऋचाओं को पढ़के बैल वा घोड़ों को रथ में से छोड़े [ढील देवे] पहिली ऋचा से दहिने बैल को पहिले छुड़ाकर द्वितीय से बायें को खोले ॥७॥

लोहितं चर्मानडुहं प्राचीनग्रीवमुत्तरलोममास्तीर्यागारं गृहान्प्रपादयन्नुत्तरां वाचयति दक्षिणेन पदा: ॥ ८ ॥ न च देहलीमभितिष्ठति ॥ ९ ॥ उत्तरपूर्वदेशेऽगारस्याग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्तेऽन्वारब्धायामुत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादि प्रतिपद्य ते परिषेचनान्तं कृत्वोत्तरया चर्मण्युपविशत उत्तरो वरः ॥ १० ॥ अथास्याः पुंस्वो जीवपुत्रायाः पुत्रमङ्क उत्तरयोपवेश्य तस्मै फलान्युत्तरेण यजुषा प्रदायोत्तरे जपित्वा वाचं यच्छत्यानक्षत्रेभ्यः ॥ ११ ॥ उदि-

प्रथम सायंकाल वर अपने घर में प्रवेश कर जो कमरा पति पत्नी के निवासका हो उसके बीच में जिस का शिरोभाग पूर्व को ओर हो और ऊपर को रोम हों ऐसे लाल बैल के चामको (शर्म वर्म०) इस ऋचा को पढ़कर बिछाके दहिने पग से बधू को घर में ले जाता हुआ वर (गृहान्) इस ऋचा को कहलावे। वधूवर के पीछे २ कोई अन्य पुरुष अग्नि को ले चले ॥८॥ चलती हुई वधू देहली पर पग दे कर न निकले ॥९॥ जिस कोठा में बैल का चर्म बिछाया है उसी के ईशान कोण में पूर्व से ही अग्नि का कुण्ड बना रक्खा हो उस में अग्नि को प्रज्वलित करने से लेकर आज्यभागाहुति कर लेने पर बहू के अन्वारम्भ करने [होमकरने वाले के दहिने कन्धे का दहिने हाथ से वा कुशों द्वारा स्पर्श करने को अन्वारम्भ कहते हैं] पर (आगन्गोष्ठं०) इत्यादि त्रयोदश आहुति का प्रधान होम करके जयाहोम से लेकर परिषेचन पर्यन्त कर्म करके (इहगावः प्रजायध्वं०) इस ऋचा को पढ़के प्रथम बिछाये लाल बैल के चर्म पर वर वधू दोनों पूर्वाभिमुख बैठें उत्तर में वर दक्षिण में पत्नी बैठे ॥ १० ॥ अनन्तर जिस के पुत्र ही पैदा होते हों और जीवित भी रहते हों ऐसी स्त्री के पुत्र को इस वधू की गोद में (सोमेनादित्या०) इस ऋचा के पाठानन्तर बैठा के उस बच्चे को (प्रस्वस्य०) मन्त्र से फल देकर (इह प्रियंप्रजमङ्गलोः०) इत्यादि दो ऋचाओं को जपकर वृषभचर्म पर बैठे हुए पतिपत्नी नक्षत्रों के उदय पर्यन्त मौन हो जावें। अर्थात् विदा कराके यथा सम्भव ऐसे समय घर पहुंचें जिस में सूर्यास्त होते ही ऊपर लिखी १३ प्रधानाहुति होम कर सकें ॥११॥

तेषु नक्षत्रेषु प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्योत्तराभ्यां यथालिङ्गं ध्रुवमरुन्धतीं च दर्शयति ॥ १२ ॥ ६ खण्डः ॥

इति द्वितीयः पटलः समाप्तः ॥

अथैनामाग्नेयेन स्थालीपाकेन याजयति ॥१॥ पत्न्यवहन्ति ॥ २ ॥ श्रपयित्वाऽभिघार्य प्राचीनमुदीनं वोद्वास्य प्रतिष्ठितमभिघार्याग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्तेऽन्वारब्धायां स्थालीपाकाज्जुहोति ॥३॥ सकृदुपस्तरणाभिघारणे द्विरवदानम् ॥४॥ अग्निर्देवता स्वाहाकारप्रदानः ॥५॥ अपि वा सकृदुपहत्य जुहुयात् ॥६॥ अग्निः स्विष्टकृद्द्वितीयः ॥ ७ ॥

नक्षत्रों का उदय होने पर उस कोठे से पूर्व वा उत्तर दिशा में बाहर निकल कर अगली (ध्रुवक्षितिः । सप्तर्षय०) इत्यादि दो मन्त्रों से यथालिङ्ग ध्रुव वा अरुन्धती का दर्शन वधू को करावे ॥ १२ ॥ यह छठा खण्ड और द्वितीय पटल समाप्त हुआ ॥

भावार्थः—इसी रात्रि में वर अपनी पत्नी को स्वयं ऋत्विज् बन के अग्निदेवता सम्बन्धी स्थालीपाक से यज्ञ करावे इस कर्म में केवल पत्नी यजमान मानी जायगी इसी लिये वधू के निज धन का ही इस में व्यय होना चाहिये ॥१॥ स्थालीपाक के लिये धान आदि को पत्नी कूटे ॥२॥ तदनन्तर कूटे और तीन बार फटके चावलों को धोकर वर पकावे अग्नि पर ही थोड़ा घी स्रुवा द्वारा भात में छोड़के अग्नि से पूर्व में वा उत्तर में उतार कर पृथिवी पर धर के फिर एक स्रुवा घी छोड़ कर अग्नि के प्रज्वलन से लेकर आज्यभाग पर्यन्त कृत्य करके पत्नी के अन्वारम्भ करने पर स्थालीपाक से होम करे ॥३॥ जिस पात्र से होम करे उस में प्रथम घी लगाना उपस्तरण कहाता बीच में अंगूठा के पर्व मात्र दो वार भात रक्खे ऊपर से एक वार घी डाल के होम करे । यह पुरोडाश के तुल्य चार अवदान होगये ॥४॥ पहिली आहुति (अग्नये स्वाहा) ऐसा मंत्र पढ़ के देवे ॥५॥ अथवा जिस स्रुवा वा कड़छी से होम करे उससे एक वार ही भात लेकर होम करे अर्थात् चतुरवदान विकल्पित है ॥६॥ (अग्नये-

सकृदुपस्तरणावदाने द्विरभिघारणम् ॥ ८ ॥ मध्यात्पूर्वस्यावदानम् ॥९॥ मध्ये होमः ॥१०॥ उत्तरार्द्धादुत्तरस्य ॥ ११ ॥ उत्तरार्द्धे पूर्वार्द्धे होमः ॥ १२ ॥ लेपयोः प्रस्तरवत्तूष्णीं स्रुचि कृत्वाऽग्नौ प्रहरति ॥ १३ ॥ सिद्धमुत्तरं परिषेचनम् ॥१४॥ तेन सर्पिष्मता ब्राह्मणं भोजयेत् ॥ १५ ॥ योऽस्यापचितस्तस्मा ऋषभं ददाति ॥१६॥ एवमत ऊर्ध्वं दक्षिणावर्जमुपोषिताभ्यां पर्वसु कार्यः ॥ १७ ॥ पूर्णपात्रस्तु दक्षि-

स्विष्टकृते स्वाहा) ऐसा पढ़ के द्वितीयाहुति देवे ॥७॥ एक वार उपस्तरण एक अवदान और दो वार अभिघारण यह चतुरवत्त भी पुरोडाशों के तुल्य यहां भी जानो ॥८॥ स्रुवा वा कर्छी से एक ही अवदान लेने के पक्ष में हविष् के बीच से एक अवदान लेवे इस कथन से इस पक्ष में उपस्तरणादि चतुरवदानका विचार नहीं लिया जायगा ॥ ९ ॥ अग्निकुण्ड के भीतर ठीक प्रज्वलित अग्नि के बीच में होम करे ॥ १० ॥ हविष् नाम स्थालीपाक के उत्तरभाग से द्वितीय स्विष्टकृत् आहुति के लिये अवदान लेवे ॥ ११ ॥ द्वितीय स्विष्ट कृत् आहुति का अग्नि के उत्तरार्द्ध के पूर्वार्द्ध में अर्थात् ईशान कोण में होम करे१२ जिन बिछे हुए कुशों पर भात और घी रक्खा गया हो उन में से थोड़े कुश लेकर उन में घी और चरु थोड़े २ प्रस्तर के तुल्य लगा के प्रस्तर के तुल्य ही हाथ से अग्नि में छोड़ दे होम कर देवे ॥ १३ ॥ इस के पश्चात् जयाहोमादि परिषेचनान्त कर्म पटल १ खण्ड २ सूत्र ७ । ८ में लिखे अनुसार करना चाहिये ॥ १४ ॥ उस शेष बचे चरु में अच्छे प्रकार घी डाल कर कुण्ड से दक्षिण में कुशासन पर बैठा के एक ब्राह्मण को भोजन करावे ॥ १५ ॥ जो इस वर का पूज्य गुरु आदि हो उसको स्थालीपाकयज्ञ की दक्षिणा में एक बैल देवे ॥१६॥ इस से आगे भी इस अग्नि देवता वाले स्थालीपाक कर्म को एक दक्षिणा को छोड़ के अन्य सब काम ज्यों का त्यों प्रत्येक पौर्णमासी तथा अमावास्या की रात्रि में स्त्री पुरुष दोनों उपवास करते हुए किया करें ॥१७॥ किन्हीं आचार्यों का मत है कि किसी पात्र में १२८ मुट्ठी अन्न भर के इस कर्म में भी ब्रह्माको

णीत्येके ॥ १८ ॥ सायंप्रातरत ऊर्ध्वं हस्तेनैते आहुती तण्डुलैर्यवैर्वा जुहुयात् ॥ १९ ॥ स्थालीपाकवद्दैवतम् ॥ २० ॥ सौरी पूर्वाहुतिः प्रातरित्येके ॥ २१ ॥ उभयतः परिषेचनं यथा पुरस्तात् ॥ २२ ॥ पार्वणेनातोऽन्यानि कर्माणि व्याख्यातान्याचाराद्यानि गृह्यन्ते ॥ २३ ॥ यथोपदेशं देवता अग्निं स्विष्टकृतं चान्तरेण ॥ २४ ॥ अविकृतमातिथ्यम् ॥ २५ ॥ वैश्वदेवे विश्वेदेवाः ॥ २६ ॥ पौर्णमास्यां पौर्णमासी यस्यां क्रियते ॥ ॥ २७ ॥ इति सप्तमः खण्डः ॥

दक्षिणा दी जावे ॥१८॥ इस से आगे प्रतिदिन सायंप्रातःकाल हाथ से ही जौ वा चावल की दो आहुती गृह्याग्नि में दिया करें ॥१९॥ स्थालीपाक के अग्नि और स्विष्टकृत् अग्नि यहां भी देवता जानो। अर्थात्—अग्नये स्वाहा। अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इन्हीं दो मंत्रों से सायंप्रातः होम करे ॥२०॥ किन्हीं आचार्यों का मत है कि नित्य प्रातःकाल के होम में पहिली आहुति (सूर्याय स्वाहा) होनी चाहिये ॥ २१ ॥ इन दो आहुतियों का होम करने से पहिले और होम के पश्चात् दोनों बार ख० २ सू० ३ में लिखे अनुसार अग्निकुण्ड के सब ओर जल सेचन करे ॥ २२ ॥ पार्वण मास पौर्णमासी अमावास्या में होने वाले स्थालीपाक के साथ अन्य भी सर्पबली आदि आचार से प्राप्त कर्म जानने चाहिये। अर्थात् पार्वणस्थालीपाक अन्य कर्मों की प्रकृति है ॥२३॥ उन२ विकृति कर्मों में कहे प्रधान देवताओं के नाम की आहुति अग्नि और स्विष्टकृत् के बीच में करनी चाहिये ॥ २४ ॥ अतिथि के लिये जो मधुपर्कादि कर्म कहा है वह किसी का विकार नहीं इस से जितना विधान किया गया है उतना ही वहां कर्त्तव्य जानो ॥२५॥ वैश्वदेव कर्म में विश्वेदेवा ही देवता होते हैं ॥२६॥ श्रावण की पौर्णमासी में जिस दिन कर्म किया जाय वहां पौर्णमासी ही देवता जानो (श्रावण्यै पौर्णमास्यै स्वाहा) इस मन्त्र से वहां स्थालीपाक का होम होगा ॥२७॥ यह सातवां खण्ड पूरा हुआ ॥

उपाकरणे समापने च ऋषिर्यः प्रजायते॥१॥ सदसस्पतिर्द्वितीयः ॥२॥ स्त्रियानुपेतेन क्षारलवणावरान्नसंसृष्टस्य च होमं परिचक्षते ॥३॥ यथोपदेशं काम्यानि बलयश्च ॥४॥ सर्वत्र स्वयं प्रज्वलितेऽग्नावुत्तरां यां समिधावादध्यात्॥५॥ आपन्मा श्रीः श्रीर्मागादिति वा ॥६॥ एतदहर्विजानीयाद्यदहर्भार्यामावहते॥७॥ त्रिरात्रमुभयोरधः शय्या ब्रह्मचर्यं क्षारलवणवर्जनं च ॥८॥ तयोः शय्यामन्तरेण दण्डो गन्धलिप्तो वाससा सूत्रेण वा परिवीतस्तिष्ठति ॥९॥ तं चतुर्थ्यापर

भावार्थः—काण्ड वा अध्याय दोनों प्रकार के उपाकरण तथा समापन नाम उत्सर्ग में काण्डानुक्रमणी में जो ऋषि बतलाये गये हैं वेही वहां देवता हैं उन्हीं के नाम से स्वाहान्त आहुति देनी चाहिये ॥ १ ॥ द्वितीय स्विष्टकृत आहुति स्थानी वहां सदसस्पति देवता लिया जायगा ॥ २ ॥ स्त्री को तथा जिस का उपनयन न हुआ हो उस पुरुष को स्थालीपाकका होम नहीं करना चाहिये। तथा क्षार (खार) लवण और कुलत्थ (कुल्थी) आदि निकृष्ट अन्न मिले हविष् के होम को आचार्य लोग वर्जित निषिद्ध कहते हैं ॥ ३ ॥ किसी विशेष कामना से कहे कर्म वा बलि कर्म स्त्री आदि को भी निषिद्ध नहीं। अर्थात् जिस को जिस वस्तु से वह कर्म करना कहा है वैसा ही करना ॥४॥ सब पाक यज्ञों में प्रज्वलित अग्नि पर (उद्दीप्य स्व० । मा नो हिंसीः०) इन दो मन्त्रों से दो समिधाका यजमान स्वयं होम करे ॥ ५ ॥ अथवा (आपन्माश्रीः० । श्रीर्मागात् ०) इन दो यजुर्मन्त्रों से उक्त दो समिधाका होम करे ॥६ ॥ जिस दिन जिस नक्षत्र में पाणिग्रहण विवाह हुआ हो उसे न भूले क्यों कि प्रति वर्ष उसी दिन उसी नक्षत्र में कहे आचार प्राप्त कर्म करे ॥ ७ ॥जिस दिन गृह प्रवेश से स्थालीपाक पर्यन्त कर्म करे उस से लेकर तीन दिन पर्यन्त दोनों स्त्री पुरुष पृथिवी पर सोवें ब्रह्मचारी रहें खार तथा लवण छोड़ देवें हविष्यान्न भोजन करें ॥ ८ ॥ ब्रह्मचर्य कहने से मधुमांस दन्तधावन अंजन तैल मर्दन चन्दन वा इतर लगाने और मालाधारणादि का भी निषेध जानो

रात्रउत्तराभ्यामुत्थाप्य प्रक्षाल्य निधायाग्नेरुपसमाधाना
द्याज्यभागान्तेऽन्वारब्धायामुत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादिप्र
तिपद्यते परिषेचनान्ते कृत्वाऽपरेणाग्निं प्राचीमुपवेश्य त-
स्याः शिरस्याज्यशेषाद् व्याहृतीभिरोंकारचतुर्थीभिरानी-
योत्तराभ्यां यथालिङ्गं मिथः समीक्ष्योत्तरयाऽऽज्यशेषेण हृ-
दयदेशौ समज्योत्तरास्तिस्रो जपित्वा शेषं समावेशने जपेत्
॥१०॥ अन्यो वैनामभिमन्त्रयेत ॥११॥ यदा मलवद्वासाः

जहां दोनों पृथिवी पर सोते हों वहां दोनों के बीच में एक गूलर वृक्ष का
मोटा दण्डा जिस में चन्दनादि सुगन्ध लगाया हो तथा वस्त्र वा सूत से लपे-
टा हो) रक्खा जावे जिस से स्त्री पुरुष परस्पर स्पर्श न कर पावें ॥ ९ ॥
उस दण्ड के विवाहानन्तर घर में आने से चौथे दिन रात के तीसरे पहर में
(उदीर्ष्वात०) इत्यादि दो ऋचाओं से उठाकर प्रक्षालन करके धर देवे ।
पश्चात् अग्निप्रज्वालन से लेकर आज्यभाग पर्यन्त पूर्वोक्त काम करके अगली
(अग्नेप्रायश्चित्ते०) इत्यादि सात प्रधानाहुती पत्नी के अन्वारम्भ करने पर
करे । पश्चात् द्वितीय खण्ड सूत्र ७ । ८ में लिखे अनुसार जयाहोमादि परिषे-
चन पर्यन्त कर्म करके अग्नि से पश्चिम में पूर्वाभिमुख पत्नी को बैठा के होम
से बचे घी में से कर्च्छी द्वारा लेकर उस वधू के शिर पर ओंकार जिन में
चौथा हो ऐसी स्वाहाकारान्त व्याहृतियों द्वारा लाकर (अपश्यंत्वा०) इत्या-
दि दो ऋचाओं से परस्पर एक दूसरे को पति पत्नी देखें अर्थात् पत्नी को सं-
बोधित करने वाली ऋचा पढ़ के पुरुष पत्नी का मुख देखे और पति को सं-
बोधित करने वाली ऋचा से पत्नी पति का मुख देखे फिर (समञ्जन्तु ऋचा-
पढ़ के शेष बचे घृत को दोनों दोनों के हृदय में लगावें । फिर (प्रजापतेतन्वं०)
इत्यादि तीन ऋचा का जप करके शेष अनुवाक को (आरोहोरु०) इत्यादि
ऋचाओं का पत्नी के साथ समागम काल में जप करे अर्थात् समागम से पूर्व
जपे । दोनों का समागम इसी चौथी रात्रि को अवश्य होना चाहिये । यही
पहिला समागम मन्त्रपाठपूर्वक होता है अन्य नहीं ॥ १० ॥ अथवा वर
वधू के समागम काल में कुछ दूर आड़ में बैठा हुआ कोई अन्य ब्राह्मण अनु-

स्यादथैनां ब्राह्मणप्रतिषिद्धानि कर्माणि संशास्ति यां मल-वद्वाससमित्येतानि ॥१२॥ रजसः प्रादुर्भावात्स्नातामृतुसमावेशन उत्तराभिरभिमन्त्रयते ॥१३॥ ८ खण्डः ॥ चतुर्थिप्रभृत्याषोडशीमुत्तरामुत्तरां युग्मां प्रजानिःश्रेयसमृतुगमन इत्युपदिशन्ति ॥१॥ अर्थप्राध्वस्य परिक्षवे परिकासनेचाप उपस्पृश्योत्तरे यथालिङ्गं जपेत् ॥२॥ एवमुत्तरैर्यथालिङ्गं चित्रियं वनस्पतिं शकृद्वीतिं सिग्वातं शकुनिमिति ॥ ३ ॥

वाक् के शेष मन्त्रों से दोनों का अभिमन्त्रण करे ॥ ११ ॥ विवाह के पश्चात् जब वधू ऋतुमती हो तब ब्राह्मणग्रन्थ में कहे अनुसार वधू को शिक्षा करे कि ऋतु काल में पहिले तीन में न स्नान करे न तेल लगावे न शिर धोवे वा काढ़े न अंजन सुरमा लगावे न दातौन करे न नख काटे न सूत काते न रस्सी बनावे न मैथुन करे न बाहर जंगल में जावे और स्नान करलेने पर भी न चाहती हुई वा पराङ्मुखी से पुरुष कभी समागम न करे ॥१२॥ ऋतुमती होने के समय से तीन दिन बीत जाने पर चौथे दिन समागम से पूर्व स्नान की स्त्री के संमुख समीप बैठ कर (विष्णुर्योनिं कल्पयतु०) इत्यादि १३ तेरह ऋचाओं से वधू का अभिमन्त्रण करे ॥ १३ ॥ यह आठवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भा०–ऋतुकालकी चौथी रात्रिसे लेके सोलहवीं रात्रि तक अगली २ समरात्रि छठी आठवीं दशमी आदि पुत्रोत्पत्ति के लिये ऋषियों ने अच्छी कही हैं ॥१॥ किसी प्रयोजन से यात्रा करने के समय छींकने वा किसी के खांसने पर हाथ पांव धो आचमन करके (अनुहव० । परिहव०) इन दो ऋचाओं का यथालिङ्ग जप करे ॥ २ ॥कार्यसिध्यर्थ यात्रा करते हुए गृहस्थ पान्थ(मुसाफिर)को चित्रय नामक (चीते का वृक्ष) वनस्पति मार्ग में मिले तो हाथ धो आचमन करके (आरात्ते अग्निरस्तु०) इस ऋचा से, यदि सिलसिले वार विष्ठा मिले वा विष्ठा का ढेर दीखे तो (नमः शकृत्सदः ०) इस ऋचा से, यदि अन्य के वस्त्र का वायु अपने शरीर से लग जावे तो (निगसि०) मन्त्र से, यदि अशुभ वाणी बोलता हुआ पक्षी मिले तो (प्रतिनः सुमनाभव०) से अथवा (यद्वातेव शकुने०)

उभयोर्हृदयसंसर्गमिच्छन्स्त्रिरात्रावरं ब्रह्मचर्यं चरित्वा स्थालीपाकं श्रपयित्वाऽग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्तेऽन्वारब्धायां स्थालीपाकाद्युत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादि प्रतिपद्यते परिषेचनान्तं कृत्वा तेन सर्पिष्मतायुग्मान्द्व्यवरान्ब्राह्मणान् भोजयित्वा सिद्धिंवाचयीत ॥४॥ श्वस्तिष्येणेति त्रिःसप्तैर्यवैः पाठां परिकिरति यदि वारुण्यसि वरुणात्त्वा निष्क्रीणामि यदि सौम्यसि सोमात्त्वा निष्क्रीणामीति ॥ ५ ॥ श्वोभूत उत्तरयोत्थाप्योत्तराभिस्तिसृभिरभि मन्त्र्योत्तरया

ऋचा से उनर का अनुमन्त्रण करे ॥३॥ वर वधू दोनों के मन का परस्पर पूर्ण प्रेम चाहने वाला वधू का पितादि पुरुष तीन दिन ब्रह्मचर्य व्रत करके स्थालीपाक पकाकर अग्नि के प्रज्वालन से लेके आज्यभागपर्यन्त कृत्य कर लेने पर अपनी पत्नी के अन्वारम्भ करने पर (प्रासरग्नि०) इत्यादि सात प्रधानाहुति और एक स्विष्टकृत् आहुति करके खं० २ के १। ८ सूत्रोक्त जयादिहोम तथा परिषेचनान्त कर्म करके होम से शेष बचे पाक में अच्छे प्रकार घी डाल के उस से दो से अधिक चार व छः ब्राह्मणों को भोजन कराकर ब्राह्मणों से कर्मफलसिद्धि का आशीर्वाद वा वरदान मांगे कहलावे ॥ ४ ॥ इस पूर्वोक्त कर्म को गृह्याग्नि में करे। वधू यदि पति को वश में करना चाहती हो तो जिस काम को कल करना चाहे उस को तिष्य नक्षत्र में करे। जिस स्थान में पाठा नाम पाढरि ओषधि खड़ी हो वहां वधू जाकर इक्कीस जो (यवों) से (यदिवारुण्यसि०यदिसौम्यसि० इनदो मन्त्रोंको पढ़२के२१जो पाठाकेसब ओर फेंके ॥५॥ प्रातःकाल अगले दिन जाकर (इमांखनामि०) ऋचा से पाठा को खोद कर (उत्तानपर्णे०) इत्यादि तीन ऋचाओं से अभिमन्त्रित करके उस की जड़ के दो टुकड़े करके (अहमस्मि०) इस ऋचा से अपने दोनों हाथों में छिपी हुई (जिस को पति न देख पावे) बांध लेवे। दोनों हाथ में बांधने पर दो वार मन्त्र पढ़े प्रथम दहिने हाथ में बांधे रात्र को सोने के समय (उपतेधां०) इस ऋचा को पढ़ के दोनों बाहुओं से पति को सब ओर से

प्रतिच्छन्नां हस्तयोरावध्यशय्याकाले बाहुभ्यां भर्त्तारं परिगृह्णीयादुपधानलिङ्गया ॥६॥ वश्योभवति ॥७॥ सपत्नी बाधनं च ॥८॥ एतेनैव कामेनोत्तरेणानुवाकेन सदादित्यमुपतिष्ठते ९॥ यक्ष्मगृहीतामन्यां वा ब्रह्मचर्ययुक्तः पुष्करसंवर्त्तमूलैरुत्तरैर्यथालिङ्गमङ्गानि संमृश्य प्रतीचीनं निरस्येत् ॥१०॥ वधूवास उत्तराभिस्तद्विदे दद्यात् ॥ ११ ॥ इति नवमः खण्डः ॥

इति तृतीयः पटलः समाप्तः ॥

उपनयनं व्याख्यास्यामः ॥१॥ गर्भाष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयीत ॥२॥ गर्भैकादशेषु राजन्यं गर्भद्वादशेषु वैश्यम् ॥३॥

पकड़े ॥ ६ ॥ तो पति अपनी पत्नी के वशीभत होजाता है यह वशीकरण प्रयोग है ॥७॥ इसी कर्म को इसी प्रकार करने से सपत्नी (सौत) को भी जीत सकती है ॥८॥ इसी सौत को नष्ट करने की कामना से दूसरा प्रयोग यह भी हो सकता है कि (उदसौसूर्योअगात्०) इस अगले अनुवाक से स्त्री नित्य २ सूर्यनारायण का उपस्थान करे ॥९॥ क्षयी रोग से पीड़ित अपनी पत्नी वा अन्य मातादि के अंगों का ब्रह्मचर्ययुक्त पुरुष कमल के नये पत्ते और मूलों द्वारा (अक्षीभ्यान्तेनासिकाभ्याम्०) इत्यादि मन्त्रों से यथालिङ्ग (अर्थात् जिस २ मन्त्र में जिस २ अंग का नाम हो उस २ से उस २ अंग का) स्पर्श कर २ पश्चिम को फैंकता जावे ॥ १० ॥ विवाह के समय अपनी वधू को जो वस्त्र मन्त्रपूर्वक पहनाया गया था उस वस्त्र को जो पुरुष इस यक्ष्मनिवारण कर्म को ठीक मन्त्रार्थ सहित जानता हो अथवा यक्ष्मरोग की औषधि ठीक जानता हो उस के लिये (परादेहि०) इत्यादि चार मन्त्रों से देदेवे ॥११॥ यह नवम खण्ड और तीसरा पटल समाप्त हुआ ॥

भा०—जिस कर्मके होजाने पर बालक गुरुकुल के उपनाम समीप लाया जाय वह श्रुति प्रतिपादित पुरुष का संस्कार कर्म उपनयन कहाता है उसका व्याख्यान अब किया जायगा॥१॥ गर्भ रहने से आठवें वर्ष में ब्राह्मण का उपनयन संस्कार करे ॥२॥ गर्भ से ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रिय का और गर्भ से बारहवें वर्ष

वसन्तो ग्रीष्मः शरदित्यृतवो वर्णानुपूर्वेण ॥४॥ ब्राह्मणान् भोजयित्वाऽऽशिषो वाचयित्वा कुमारं भोजयित्वाऽनुवाकस्य प्रथमेन यजुषाऽपः संसृज्योष्णाः शीतास्वानीयोत्तरयाशिर उनत्ति ॥५॥ त्रीं स्त्रीन्दर्भानन्तर्धायोत्तराभिश्चतसृभिः प्रतिमन्त्रं प्रतिदिशं प्रवपति ॥६॥ वयन्तमुत्तरयानुमन्त्रयते ॥७॥

में वैश्य का संस्कार करे ॥३॥ तीनों वर्णों के लिये वसन्तग्रीष्म और शरद्ऋतु यथाक्रम उपनयन के हैं अर्थात् वसन्तमें ब्राह्मण का ग्रीष्म में क्षत्रिय काऔर शरद् ऋतु में वैश्य का उपनयन करे ॥४॥ उपनयन से पहिले दिन बालक के माता पिता नान्दीश्राद्ध मातृपूजादि करें। अगले दिन प्रातः ब्राह्मणों को भोजन कराके उन से पुण्याहवाचनादि आशीर्वाद कहलाके बालक को भोजन करावे। यहां तक माता पिता का काम है। पश्चात् आचार्य (उष्णेनवायो०) अनुवाक के इस पहिले यजु मन्त्र से शीत जल में गर्म जल मिलाके (आप उन्दन्तु०) इस अगली ऋचा से बालक का शिर भिगोवे ॥५॥ फिर बालक के शिर में पूर्व की ओर तीन दाभ बालों में लगा कर (येनावपत्०) ऋचा पढ़ के क्षुरे कुश सहित बाल काटे (असौ) इस मन्त्रस्थ पद के स्थान में बालक का नाम प्रथमविभक्त्यन्त बोले। इसी प्रकार अन्यत्र भी अदस् शब्द के प्रयोग में बालक का नाम लेवे। बाल काट कर जिस में जौ बिखेरे हों ऐसे बैल के गोबर के पिण्ड पर छोड़े। इसी प्रकार कुश लगा के दहिनी ओर के बाल (येनपूषा०) मन्त्र से काटे (येनभूय:०) मन्त्र से पश्चिम की ओर के और (येनपूषा०) मन्त्र से उत्तर की ओर के बाल काटे। इस चौथे मन्त्र में असौपद के स्थान में संबुद्धि सहित नाम बालक का बोले। इस प्रकार आचार्य के बाल काट चुकने पर उसी मिले हुए जल से शिर भिगो कर नाई बालकके बाल बनावे ॥६॥ बाल बनाते हुए नाई का (यत्क्षुरेणमर्चयता०) मन्त्र पढ़ के अनुमन्त्रण आचार्य करे। तथा दक्षिण की ओर बैठी बालक की माता वा कोई ब्रह्मचारी बाल काटते हुए आचार्य का अनुमन्त्रण करे यह भी सूत्रार्थ हो सकता है ॥ ७ ॥

दक्षिणतो माताब्रह्मचारीवानडुहे शकृत्पिंडेयवान्निधाय तस्मिन्केशानुपयम्योत्तरयोदुम्बरमूलेदर्भस्तम्बेवा निदधाति ॥८॥ स्नातमग्ने रुपसमाधानाद्याज्यभागान्ते पालाशीं समिधमुत्तरया धाप्योत्तरेणाग्निं दक्षिणेनपदाऽश्मानमास्थापयत्यातिष्ठेति ॥ ९ ॥ वासः सद्यः कृत्तोतमुत्तराभ्यामभिमन्त्र्योत्तराभिस्तिसृभिः परिधाप्यपरिहितमुत्तरयानुमन्त्रयते ॥ १०॥ मौञ्जींमेखलां त्रिवृतांत्रिःप्रदक्षिणमुत्तराभ्यां परिवीयाजिनमुत्तरमुत्तरया ॥ ११ ॥ उत्तरेणाग्निं दर्भान्त्सं

बालक की माता वा कोई ब्रह्मचारी दक्षिनी ओर बैठकर किसी पात्र में बैल के गोवर का पिण्ड धरके उस पर जौ गिरा के उस पर नाई के कनाये हुए बालों को लेता जावे जिस से बाल भूमि पर न गिरें तदनन्तर उन बालों को (उप्त्वाय केशान्०) मन्त्र से गूलर वृक्ष की जड़ में वा कुशों के गुच्छों पर ही धर देवे ॥ ८ ॥ पश्चात् बालक को स्नान कराके अच्छे वस्त्र पहना के शिखा में गांठ देकर (यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं०) मन्त्र से यज्ञोपवीत पहना कर आचमन कराके अग्नि के प्रज्वालन से लेकर आज्यभाग पर्यन्त कृत्य करके ढांक की एक समिधा बालक के हाथ से (आयुर्दादेव०) इस मन्त्र से अग्नि में छुड़ावे । आचार्य लड़के से मन्त्र बुलवाके समिधा चढ़वावे पश्चात् अग्नि से उत्तर में स्थापित किये पत्थर पर (आतिष्ठ०) मन्त्र पढ़के बालक को आचार्य खड़ा करे ॥ ९ ॥ एकही दिन में सूत कातकर विने हुए वस्त्रका (रेवतीस्त्वा०) इत्यादि दो ऋचाओंसे अभिमन्त्रण करके उस वस्त्र को (या अकृन्तन्०) इत्यादि तीन ऋचा पढ़के बालक को पहनावे पश्चात् वस्त्र पहिने हुए कुमार का (परीदंवासः०) मन्त्र से अनुमन्त्रण करे ।१०। पश्चात् (इयं दुरुक्तात्०) इत्यादि दो ऋचाओं से मूंज की त्रिवृता मेखला को तीन वार प्रदक्षिण बालक की कटि में बांध कर (मित्रस्य चक्षुः०) ऋचा से कृष्णाजिनको पिछौरा (द्विपट्टा) की रीति से उढ़ावे ॥ ११ ॥ पश्चात् अग्नि से उत्तर में दाभ बिछा कर उन पर इस बालक को (आगन्त्रा समगन्महि)

स्तीर्य तेषत्रेनमुत्तरयाऽवस्थाप्योदकाञ्जलिमस्मा अञ्जला-वानीयोत्तरया त्रिःप्रोक्ष्योत्तरैर्दक्षिणेहस्ते गृहीत्वोत्तरैर्देवताभ्यः परिदायोत्तरेणयजुषोपनीय सुप्रजा इति दक्षिणे कर्णे जपति ॥ १२ ॥ इति दशमः खण्डः ॥

ब्रह्मचर्यमागामिति कुमार आह ॥ १ ॥ पृष्टं परस्य प्रतिवचनं कुमारस्य ॥ २ ॥ शेषंपरोजपति ॥ ३ ॥ प्रत्यगाशिषंचैनंवाचयति ॥ ४ ॥ उक्तमाज्यभागान्तम् ॥ ५ ॥ अत्रैन-

मन्त्र से बैठा के और उस से पश्चिम में आचार्य स्वयं बैठ कर अपनी अंजली जल से भरके सन्मुख बैठे बालक की अंजलि में छोड़ के बालक से प्रेरणा करे कि (समुद्रादूर्मिः०) इस मन्त्र को पढ़वाके जल सेचन करावे फिर (अग्निष्टेहस्तमग्रभीत् ०) इत्यादि दश मन्त्रों को पढ़के बालक का दहिना हाथ पकड़े फिर प्रतिमन्त्र के अन्त में हाथ पकड़े फिर (अग्नये त्वा परिददामि०) इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से देवताओं को सौंप कर (देवस्यत्वा सवितुः०) इस यजु के मन्त्र से अपने समीप लेवे अर्थात् मन्त्र पढ़के स्वीकार करे संबोधनान्त नाम बोले पश्चात् (सुप्रजा०) इस मन्त्र को बालक के दहिने कान में जपे ॥ १२ ॥ इति १० खण्डः ॥

भाषार्थः—(ब्रह्मचर्यमागां०) से लेके (सवित्रा प्रसूतः) तक मन्त्र को बालक उच्चस्वर से बोले ॥ १ ॥ पूछने का वाक्य आचार्य बोले और उससे अगला संहिता में लिखे अनुसार प्रत्युत्तर रूप मन्त्रवाक्य जिस का उपनयन होता है वह बालक बोले । जैसे आचार्य कहे (कोनामासि) तब बालक कहे (अमुकनामास्मि) इसी प्रकार चारों मन्त्र वाक्य बोलें ॥ २॥ अनुवाक का शेष भाग आचार्य जपे (अमुक शर्मैषते०) से लेकर (अनुसंचर अमुकशर्मन्) तक ॥ ३ ॥ (अध्वनामध्वपते०) इत्यादि प्रत्यगाशिष् मन्त्रवाक्यों को आचार्य बालक से कहलावे ॥ ४ ॥ इसी अवसर में अग्नि प्रज्वलन से लेकर आज्यभाग पर्यन्त कृत्य करके आगे कहे बालक सम्बन्धी प्रार्थना के मन्त्र भी आचार्य कहलावे ॥ ५ ॥ इस अवसर में (योगेयोगे०) इत्यादि ग्यारह प्रधान आहुतियों का होम आचार्य स्वयं मन्त्र बोल २ कर बालक से कराके खं० २

मुत्तराआहुतीर्हावयित्वाजयादिप्रतिपद्यते ॥ ६ ॥ परिषेचना न्तंकृत्वाऽपरेणाग्निमुदगग्रंकूर्चंनिधायतस्मिन्नुत्तरेणयजुषो- पनेतोपविशति ॥ ७ ॥ पुरस्तात्प्रत्यङ्डासीनः कुमारो द- क्षिणेन पाणिना दक्षिणं पादमन्वारभ्याहसावित्रींभोअनु- ब्रूहीति ॥ ८ ॥ तस्माअन्वाहतत्सवितुरिति ॥ ९ ॥ पच्छो ऽर्द्धर्चंशस्ततःसर्वाम् ॥ १० ॥ व्याहृतीर्विहृताःपादादिष्वन्तेषुवा ॥ ११ ॥ तथार्द्धर्चयोरुत्तमां कृत्स्नायाः ॥ १२ ॥ कुमार उत्तरेण मन्त्रेणोत्तरमोष्ठमुपस्पृशते ॥ १३ ॥ कर्णावुत्तरेण १४ दण्डमुत्तरेणादत्ते ॥ १५ ॥ पालाशो दण्डो ब्राह्मणस्य नै-

सू० ७ में कहा जयादि होम आचार्य स्वयं करे ॥ ६ ॥ खं० २ सू० ८ में कहा प- रिषेचनान्त कर्म करके अग्नि से पश्चिम में उत्तर को अग्रभाग करके कुशों के बनाये कूर्च (आसन) को रखके उस पर (राष्ट्रभृदसि०) मन्त्र पढ़के उ- पनयन कर्त्ता आचार्य बैठे ॥ ७ ॥ आचार्य से पूर्व में पश्चिमाभिमुख बैठा बालक दहिने हाथ से आचार्य का दहिना पग पकड़ के (सावित्रीं भो अनु- ब्रूहि) ऐसा वाक्य कहे ॥ ८ ॥ उस ब्रह्मचारी को आचार्य (तत्सवितु०) इ- स सावित्री ऋचा का उपदेश करे ॥ ९ ॥ प्रथम तीनों पाद गायत्री का एक २ पाद पर ठहर २ के उपदेश करे । द्वितीयवार में आधे २ मन्त्र पर ठहर २ के उपदेश करे तदनन्तर तृतीयवार में पूरे मन्त्र का उपदेश करे ॥ १० ॥ प्रथम उपदेश में तीनों पाद के आदि में वा अन्त में क्रम से भूआदि एक २ व्याहृ- ति बोले ॥ ११ ॥ दो अर्द्धर्चों के आदि में वा अन्त में भूः , भुवः दो व्याहृति बुलवावे तथा तीसरी स्वः को पूरे मन्त्र के आदि में वा अन्त में बोलवावे ॥ १२ ॥ वहीं बैठा कुमार ब्रह्मचारी (अमृधमसौ सौम्य०) मन्त्र पढ़ अपने दहिने हाथ से अपने ऊपर के ओष्ठ का स्पर्श करे ॥ १३ ॥ फिर ब्रह्मचारी (ब्र- ह्मण आणीस्थः) मन्त्र पढ़के दोनों हाथों से अपने दोनों कानों का स्पर्श करे ॥ १४ ॥ (सुश्रवः सुश्रवसम्०) मन्त्र पढ़ के ब्रह्मचारी दण्ड को हाथ में

न्यग्रोधस्कन्धजोवाङग्रोराजन्यस्य बादरऔदुम्बरो वा वैश्यस्य ॥१६॥ वार्क्षोदण्डइत्यवर्णसंयोगेनैकउपदिशन्ति ॥१७॥ स्मृतं च मइत्येतद्वाचयित्वा गुरवे वरं दत्वोदायुषेत्युत्थाप्योत्तरैरादित्यमुपतिष्ठते ॥ १८ ॥ यंकामयेत नायंमच्छिद्येतेति तमुत्तरयादक्षिणे हस्ते गृह्णीयात् ॥ १९ ॥ त्र्यहमेतमग्निं धारयन्ति ॥२०॥ क्षारलवणवर्जनं च॥२१॥ परित्वेतिपरिमृज्य तस्मिन्नुत्तरैर्मन्त्रैः समिध आदध्यात् ॥ २२ ॥ एवमन्यस्मिन्नपि ॥ २३ ॥ सदारण्यादेधानाहृत्य ॥ २४ ॥ उ

में लेवे ॥ १५ ॥ पलाश (ढांक) का दण्ड ब्राह्मण का हो वट वृक्ष के स्कन्ध नाम गुद्दे में निकली शाखाका नीचे का भाग जिस का ऊपर को रहे ऐसा दण्ड क्षत्रिय ब्रह्मचारी का हो तथा बेरिया वा गूलरी का दण्ड वैश्य का हो ॥ १६ ॥ किसी यज्ञिय वृक्ष का दण्ड सब ब्रह्मचारियों का हो ऐसा किन्हीं कल्पसूत्रकार आचार्यों का मत है। इस पक्ष में वर्णों के साथ भिन्न २ दंडों का संयोग नहीं है ॥ १७ ॥ फिर आचार्य (स्मृतंचमे) इत्यादि वाक्य को ब्रह्मचारी से कहलावे। शिष्य गुरु को गौ दक्षिणा देवे (उदायुषा०) मन्त्र पढ़के आचार्य शिष्य को उठावे और शिष्य (तच्चक्षुः०) इत्यादि (सूर्यदृशे) पर्यन्त मन्त्रों से सूर्यनारायण का उपस्थान करे ॥ १८ ॥ गुरु जिस को चाहता हो कि यह शिष्य समावर्त्तन के समय तक हम से अलग न हो उस का (यस्मिन्भूतं०) इस ऋचा से दहिना हाथ पकड़े ॥ १९ ॥ ब्रह्मचारी लोग इस उपनयन कर्म के अग्नि को तीन दिन सुरक्षित रक्खें बुतने न देवें ॥ २० ॥ तथा तीन दिन खार और लवण भी न खावें ॥ २१ ॥ (परित्वा०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के जल से अग्नि के सब ओर मार्जन करके उस उपनयनाग्नि में (अग्नयेसमिधं०) इत्यादि बारह मन्त्रों से प्रतिदिन सायंप्रातः बारह २ समिधा चढ़ावें ॥ २२ ॥ तीन दिन के पश्चात् अन्य लौकिक अग्नि में भी इसी प्रकार समावर्त्तन पर्यन्त नित्य २ ब्रह्मचारी उक्त मन्त्रों से समिदाधान कियाकरे ॥२३॥ सदा ही निर्जन वन में से दूरसे समिधा लाया करे ॥ २४ ॥ अगली (ब्रह्मचा-

त्तरया संशास्ति ॥ २५ ॥ वासश्चतुर्थीमुत्तरया दत्तेऽन्यत्परिधाप्य ॥ २६ ॥

इत्येकादशः खण्डः ॥

वेदमधीत्य स्नास्यन्प्रागुदयाद्व्रजं प्रविश्यान्तर्लोम्ना चर्मणा द्वारमपिधायास्ते ॥ १ ॥ नैनमेतदहरादित्योऽभितपेत् ॥२॥ मध्यन्दिनेऽग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्ते पालाशीं समिधमुत्तरयाऽऽधायाऽपरेणाग्निं कट एरकायां वोपविश्योत्तरया क्षुरमभिमन्त्र्योत्तरे यजुषा वप्त्रे प्रदायाऽपां संसर्जनाद्याकेशनिधानात्समानम् ॥३॥ जघनार्धे व्रजस्योपविश्य विस्रस्य मेखलां ब्रह्मचारिणे प्रयच्छति ॥ ४ ॥ तां स उत्त-

यसि०) इत्यादि ऋचा से गुरुब्रह्मचारी को शिक्षा करे मन्त्रार्थ समझावे ॥२५॥ तीन दिन पूरे होने पर चौथे दिन की रात में खं० १० सू० १० में जो वस्त्र ब्रह्मचारी को पहनाया गया था उस को (यस्यतेप्रथमवास्यं०) ऋचा पढ़ के आचार्य ले लेवे ब्रह्मचारी को अन्यवस्त्र पहना देवे ॥ २६ ॥ यह ग्यारहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भाषार्थः-अर्थ पाठसहित साङ्गवेद पढ़ के समावर्त्तन स्नान करना चाहता हुआ सूर्योदय से पहिले ही गोशाला में जाकर भीतर को जिस के रोम हों ऐसे चर्म से गोशाला के द्वार को ढांप कर बैठ जावे ॥ १ ॥ इस दिन इस ब्रह्मचारी को सूर्यका घाम न लगे ॥२॥ पश्चात् मध्याह्न में दो पहर के समय अग्नि के प्रज्वलन से लेके आज्यभागाहुति तक कार्य करके (इमंस्तोमं०) ऋचा से ढांक की १ समिधा अग्नि में चढ़ा के अग्नि से पश्चिम में चटाई पर खुले तृणों पर बैठ के (त्र्यायुषं०) ऋचा से क्षुरा का अभिमन्त्रण करके (शिवोनामसि०) मन्त्र से बाल बनाने वाले नाई आदि को छुरा देवे । शीतोष्ण जल मिलाने से लेकर केश गाढ़ देने तक खं० १० सू० ५–८ तक में कहा कृत्य यहां भी वैसा ही जानो ॥ ३ ॥ फिर गोशाला के पश्चिमार्द्ध भाग में बैठ के मेखला को खोलकर किसी ब्रह्मचारी को देदेवे ॥४॥ वह ब्रह्मचारी उस मेखला

रेण यजुषोदुम्बरमूलेदर्भस्तम्बे वोपगूहति ॥ ५ ॥ एवंविहिताभिरेवाद्भिरुत्तराभिः षड्भिः स्नात्वोत्तरयौदुम्बरेणदतो धावते ॥ ६ ॥ स्नानीयोच्छादितस्नातः ॥ ७ ॥ उत्तरेणयजुषाऽहतमन्तरं वासः परिधाय सार्वसुरभिणा चन्दनेनोत्तरैर्देवताभ्यः प्रदायोत्तरयानुलिप्य मणिंसौवर्णं सोपधानं सूत्रोतमुत्तरयोदपात्रेत्रिःप्रदक्षिणं परिप्लाव्योत्तरया ग्रीवास्वाबध्यैवमेव बादरंमणिं मन्त्रवर्जं सव्येपाणावाबध्याहतमुत्तरं वासो

को (इदमहं०) मन्त्र से गूलरी वृक्षकी जड़ में वा दाभों के गुच्छों में छिपादे वा गाढ़ देवे ॥ ५ ॥ पूर्वोक्त गर्म और ठंढा दोनों मिले हुये जल से (आपोहिष्ठा०) इत्यादि तीन तथा (हिरण्यवर्णा०) इत्यादि तीन ऐसे छः मन्त्र पढ़ के एक वार स्नान करे पश्चात् (अन्नाद्यायव्यूहध्वं०) मन्त्र पढ़ के गूलर की दातौन करे ॥ ६ ॥ औषधियों के चूर्णादि से उबटन कर आमलों से शिर धो के अच्छे प्रकार स्नान करे ॥ ७ ॥ पश्चात् (सोमस्यतनूरसि०) इस मन्त्र से चौरेदार नये धोती वस्त्र को पहन कर केशर कस्तूरी आदि सब सुगन्ध द्रव्यों से मिश्रित मिले हुये चन्दन को प्रथम (नमोग्रहाय०) इत्यादि मन्त्रों द्वारा देवताओं को अर्पण करे अर्थात् अनामिका अङ्गुली से किंचित् २ पृथिवी पर प्रत्येक मन्त्रान्त में छोड़े फिर उस सुगन्ध मिश्रित चन्दन को (अप्सरस्सुयोगन्धः०) मन्त्र पढ़के अपने शिर आदि सब अङ्गों में लगावे फिर जिसमें हीरा जवाहिरात जड़े हों ऐसे सुवर्ण के मणिरूप आभूषण को (जो सूत में प्रोत-पोहा हो) तांबेके जलपात्र में (इयमोषधी त्रायमाणा०) ऋचा से डुबाके तीनवार प्रदक्षिण लगातार फिरावे फिर (अपाशोऽस्युरोम०) इस ऋचा से उस मणि जटित आभूषण को अपने कण्ठ में बांध लेवे । इसी प्रकार बेर (बदर) की गुठिली के मणियों को सूत में पोहकर जलपात्र में तीनवार प्रदक्षिण विना मन्त्र पढ़े फिरा के वाम हाथ में बांध लेवे फिर अहत नाम थान आदि में से फाड़ा न गया ऐसा चौरेदार मुकटा आदि दुपट्टा स्थानी वस्त्र (रेवतीस्त्वा०) मन्त्र पढ़ के उपनयन के तुल्य स्वयं धारण करे अथवा आचार्य हो तो वही धारण

रेवतीस्त्वेति समानम् ॥८॥ तस्यदशायां प्रवर्त्तौ प्रबध्यद्व्यां मायायाजयेनाऽऽयानायनुत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादिप्रति-पद्यते ॥ ९ ॥ परिषेचनान्तं कृत्वैताभिरे वा दक्षिणे कर्ण आबध्नीतैताभिः ॥ १० ॥ एवमुत्तरैर्यथालिङ्गं स्रजः शिरस्या-ज्जनमादर्शावेक्षणमुपानहौ क्षत्रं दण्डमिति ॥ ११ ॥ वाचं यच्छत्यानक्षत्रेभ्यः ॥ १२ ॥ उदितेषु नक्षत्रेषु प्राचीमुदीचीं वादिशमुपनिष्क्रम्योत्तरेणार्द्धर्चेन दिश उपस्थायोत्तरेण न-क्षत्राणि चन्द्रमसमिति ॥ १३ ॥ रातिनासंभाष्य यथार्थं

करावे ॥ ८ ॥ उस ओढ़े वस्त्र के छोर में सुवर्ण के दोनों कुण्डल लपेट कर कलों पर रखके उन कुण्डों पर गिराये घी से प्रधान होम की अगली (आ-युष्यवर्चस्यम्०) इत्यादि आठ आहुति देवे। फिर खं० २ सू० ७ में कही ज-यादि ५८ आहुतियों का होम करे ॥ ९ ॥ फिर खं० २ सू० ८ में कहा परिषे-चन पर्यन्त कृत्य करके (आयुष्यं वर्चस्यम्०) इत्यादि आठ ऋचाओं से प्रथम दहिने कान में एक कुण्डल पहिने और इन्हीं आठ ऋचाओं को पढ़के वाम कान में द्वितीय कुण्डल धारण करे ॥ १० ॥ पश्चात् (शुभिकेशिरः) इत्यादि दो ऋचाओं से शिर में माला पहिने (यदाञ्जनम्०) इन दो ऋचाओं से आंखों में अञ्जन लगावे (यन्मेवर्चः०) इस से शीशा देखे (प्रतिष्ठस्थः०) इस से दोनों पगों में जूते पहिने (प्रजापतेः शरणमसि०) इससे छाता को ऊपर ताने और (देवस्य त्वा०) इस मन्त्र से बांस की लठी हाथ में लेवे ॥ ११ ॥ पश्चात् स-न्ध्या के नक्षत्र दीखने तक मौन होजावे ॥ १२ ॥ नक्षत्र दीखने पर पूर्व वा उत्तर की ओर कोठे से बाहर निकल कर (देवीः षडुर्वी०) इत्यादि आधे मन्त्र से सब दिशाओं का उपस्थान करके (माहासमहि०) इत्यादि आधे मन्त्र से नक्षत्रों और चन्द्रमा का उपस्थान करे ॥१३॥ फिर अपने किसी मित्र से सम्भा-षण करके कि मुझ को क्या करना चाहिये किस आश्रम में रहूं इत्यादि विचार

गच्छति ॥ १४ ॥ इतिद्वादशःखण्डः ॥

अथैतदपरं तूष्णीमेवतीर्थे स्नात्वातूष्णीं समिधमादधाति ॥ १ ॥ यत्राऽस्मा अपचितिं कुर्वन्ति तत्कूर्चउपविशति यथा पुरस्तात् ॥ २ ॥ एवमुत्तराभ्यां यथालिङ्गं राजास्थपतिश्च ॥ ३ ॥ आपः पाद्या इतिप्राह ॥ ४ ॥ उत्तरयाभिमन्त्र्य दक्षिणं पादं ब्राह्मणायप्रयच्छेत् सव्यंशूद्राय ॥५॥ प्रक्षालयितारमुपस्पृश्योत्तरेण यजुषाऽऽत्मानं प्रत्यभिमृशेत् ॥ ६ ॥ कूर्चाभ्यां परिगृह्यमृन्मये नार्हणीया आपइति प्राह ॥ ७ ॥ उत्तरयाऽभिमन्त्र्याऽञ्जलावेकदेशआनीयमान उत्तरं यजुर्जपेत् ॥ ८ ॥ शेषं पुरस्तान्निनीयमानमुत्तरया

करके नियत किये आश्रम को प्राप्त होजावे॥१४॥यह बारहवांखण्डसमाप्तहुआ।

भाषार्थः—इस के पश्चात् किसी नदी तीर्थ पर बिना मन्त्र स्नान करके बिना मन्त्र अग्नि में एक समिधा चढ़ावे ॥ १ ॥ फिर कुटुम्बी लोगों ने जिस जगह मधुपर्क पूजा करने को आसन बिछाया हो वहां उस आसन पर बैठे जैसे खं० ११ सू० ७ में आचार्य का बैठना (राष्ट्रभृदसि०) मन्त्र से लिखा है वैसे यहां भी बैठे ॥ २ ॥ वैसे ही राजा की पूजा हो तो (राष्ट्रभृदसिसम्राडासन्दी०) मन्त्र से राजा और स्थपति की पूजा हो तो (राष्ट्रभृदस्यधिपत्न्यासन्दी०) मन्त्र पढ़के वह बैठे ॥ ३ ॥ फिर मधुपर्क देने वाला पग धोने के लिये हाथ में जल लेके (आपः पाद्याः) ऐसा कहे ॥ ४ ॥ फिर पूजनीय स्नातकादि पूजक ब्राह्मण हो तो (आपः पादावनेजनीः०) मन्त्र पढ़के दहिना पग पहिले धोने को देवे तथा पूजक शूद्र हो तो वाम पग पहिले धुलावे ॥५॥ फिर हाथ से पग धोने वाले के हाथों का दहिने हाथ से स्पर्श करे ॥६॥ फिर पूजक पुरुष मट्टी के पात्र में पुष्पाक्षत संयुक्त जल लेके दोनों ओर से कुश के कूचों से पकड़ के (अर्हणीया आपः) ऐसा कहे ॥ ७ ॥ फिर स्नातकादि पूज्य (आमागन्०) इस मन्त्र से जल का अभिमन्त्रण कर थोड़ा जल उस में से अपनी अञ्जली में आने पर (विराजो दोहोऽसि०) मन्त्र का जप करे ॥८॥ शेष बचे

नुमन्त्रयते ॥९॥ दधिमध्विति संसृज्य कांस्येन वर्षीयसापि-धाय कूर्चाभ्यां परिगृह्य मधुपर्क इतिप्राह ॥१०॥ त्रिवृतमेके घृतं च ॥११॥ पाङ्क्तमेके धानाःसक्तूंश्च ॥१२॥ उत्तराभ्यामभिमन्त्र्य यजुर्भ्यामप आचामति पुरस्तादुपरिष्टाच्चोत्तरया त्रिः प्रा-श्यानुकम्प्याय प्रयच्छेत् ॥१३॥ प्रतिगृह्यैव राजास्थपतिर्वा पुरोहिताय ॥१४॥ गौरिति गां प्राह ॥१५॥ उत्तरयाभिमन्त्र्य तस्यै वपां श्रपयित्वोपस्तीर्णाभिघारितां मध्यमेनान्तमेन

जल को पूजक पूर्व दिशा में छोड़ता हो तब उस जल की ओर देखता हुआ (समुद्रं वः प्रहिणोमि०) इस मन्त्र को पढ़े ॥९॥ फिर पूजक दही और सहत को मिला के कांसे के बड़े पात्र से ढांपकर दोनों ओर से कुश के आसनों से पकड़ के (मधुपर्कः) ऐसा कहे ॥१०॥ किन्हीं आचार्यों का मत है कि मधुपर्क में घृत भी हो तो दही शहत घी तीन हों ॥११॥ तथा किन्हीं कल्पसूत्रकारों की राय है कि भूने जौ और सत्तू मिल के पांच वस्तु मधुपर्क में हों ॥१२॥ (अन्नस्य विद्यायै आ-भागनू०) इन दो मन्त्रों से स्नातकादि मधुपर्क का अभिमन्त्रण करके हाथ में लेकर (यन्मधुनो०) मन्त्र पढ के तीन वार प्राशन करे एक वार मन्त्र से दो वार तूष्णीम् तथा (अमृतोप०) मन्त्र पढ़ के मधुपर्क प्राशन से पहिले और (अमृतापि०) मन्त्र पढ़ के प्राशन के बाद आचमन करे। शेष बचे मधुपर्क को अपने किसी प्रिय मित्र वा भाई को देवे जिस ने समावर्त्तन ठीकर किया हो। उस से भी शेष बचे को वह भी समावर्त्तन किये शिष्यादि को देवे और उक्त विधि से वे भी प्राशन करें ॥१३॥ राजा और स्थपति पूजक के हाथ से मधुपर्क लेकर पुरोहित को देदेवे और अभिमन्त्रणादि प्राशन पर्यन्त पुरोहित ही करे ॥१४॥ मधुपर्क दाता (गौः) ऐसा गौ को समक्ष रख के कहे ॥१५॥ यदि पूज्य स्नातकादि गौ का संज्ञपन चाहता हो तो (गौरस्यपहतपा०) मन्त्र से अभिमन्त्रण करे। संज्ञपनादि दाता करे वपा को अग्नि में पका के नीचे ऊपर दोनों ओर एकर स्रुवा घी छोड़ कर दो पत्ते वाली ढांक की डाली ले कर उस के मध्यम वा अन्तिम पत्ते पर धर के (अग्निःप्राश्नातु०) इस ऋचा से औपासन अग्नि में वा लौकिकाग्नि में हो-

वा पलाशपर्णेनोत्तरया जुहोति ॥१६॥ यद्युत्सृजेदुपांशूत्तरां जपित्वोमुत्सृजतेत्युच्चैः ॥ १७ ॥ अन्नं प्रोक्तमुपांशूत्तरैरभिमन्त्र्योंकल्पयतेत्युच्चैः ॥ १८ ॥ आचार्यायर्त्विजे श्वशुराय राज्ञ इति परिसंवत्सरादुपतिष्ठद्भ्य एतत्कार्यम् ॥ १९ ॥ सकृत्प्रवक्त्रे चित्राय ॥ २० ॥ १३ खण्डः ।

इति पञ्चमः पटलः समाप्तः ॥

सीमन्तोन्नयनं प्रथमे गर्भे चतुर्थेमासि ॥१॥ ब्राह्मणान् भोजयित्वाऽऽशिषो वाचयित्वाऽग्नेरुपसमाधानाद्याज्यभागान्तेऽन्वारब्धायामुत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादि प्रतिपद्यते ॥२॥ परिषेचनान्तं कृत्वाऽपरेणाग्निं प्राचीमुपवेश्य त्रेण्या

न करे (यह सदा से विकल्पित कर्म मनु आदि की सम्मत्यनुसार "लोकविक्रुष्ट से वध" कलियुग में सर्वथा ही वर्जित है) ॥१६॥ यदि स्नातकादि गौ को छोड़ देना चाहै तो (चतुरो यज्ञो वर्धतां०) इस मन्त्र को उपांशु धीरे से पढ़ के (ओमुत्सृजत) ऐसा उच्चस्वर से कहे ॥१७॥ फिर दाता सिद्ध अन्न को (अन्नम्) ऐसा कह के निवेदन करे स्नातकादि (भूतम्०) इत्यादि पांच मन्त्रों से उपांशु अभिमन्त्रण कर के (ओं कल्पयत) ऐसा उच्चस्वर से कहे ॥१८॥ आचार्य ऋत्विज श्वशुर और राजा इन चारों के लिये आसन बिछाने से भोजन पर्यन्त पूजन प्रति वर्ष अपने घर आवें तो एक बार करे ॥१९॥ अर्थ पाठ सहित उत्तम प्रकार से वेद पढ़ाने वाले अध्यापक का मधु पर्क पूजन एक बार करे ॥२०॥ यह तेरह वां खण्ड और पांचवां पटल समाप्त हुआ ।

भाषार्थः—सीमन्तोन्नयन कर्म पहिले गर्भ के चौथे महीने में करे गर्भिणी के शिरस्थ केशोंमें एक रेखा की जाती है जिस को (मांग) भी कहते हैं वह जिस में विधि पूर्वक की जाती है उस गर्भसंस्कार का सीमन्तोन्नयन नाम है ॥१॥ ब्राह्मणों को भोजन करा तथा स्वस्ति पुण्याह वाचन कराके खं० १सू० ११

शलल्या त्रिभिर्दर्भपुञ्जीलैः शलालुग्लप्सेनेत्यूर्ध्वं सीमन्त-मुन्नयति व्याहृतीभिरुत्तराभ्यां च ॥ ३ ॥ गायतमिति वीणा गाथिनौ संशास्ति ॥४॥ उत्तरयोः पूर्वा साल्वानाम् ॥५॥ ब्रा-ह्मणानामितरा नदीनिर्देशश्च यस्यां वसन्ति ॥ ६ ॥ यवान् विरूढानाबध्य वाचं यच्छत्यानक्षत्रेभ्यः ॥७॥ उदितेषु नक्ष-त्रेषु प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्य वत्समन्वारभ्य व्या-हृतीश्च जपित्वा वाचं विसृजते ॥ ८ ॥

में कहे अग्नि प्रज्वलन से ले कर ख०२ सू०६ में कहे आज्यभाग पर्यन्त कर्म कर के पत्नी के अन्वारम्भ करने पर (धाता ददातु नो०) इत्यादि चार तथा (य-स्त्वा हृदा०) इत्यादि चार इन आठ आहुतियों का प्रधान होम करके ख०२ सू०७ में कही जयादि ५८ आहुति करे ॥२॥ फिर ख०२। सू०३ में कहा परिषेचन पर्यन्त कर्म करके अग्नि से पश्चिम में पत्नी को पूर्वाभिमुख बैठा के तीन ज-गह श्वेत सेही के कांटे, जिन के साथ अन्य नहीं ऐसे दाभ के तीन तस्मा और गूलरी के कच्चे फलों का गुच्छा इन सब को इकट्ठा कर इन से तीन व्याहृति (राकामहं०। यास्ते राके०) इन सब पांच मन्त्रों को पढ़ के पति वा पति न होतो देवर सीमन्त का उन्नयन करे (मांग निकाले) ॥३॥ फिर (गायतम्) ऐसा कह कर वीणा पर गाने वाले दो पुरुषों को प्रेरणा करे कि वेद मन्त्रों का गायन करो ॥४। साल्व देश वासी लोग (यौगन्धरि:०) इस ऋचा का गान करें ॥५॥ ब्रा-ह्मण लोगों का सीमन्त होतो सब देश के (सोमएवनोराजा०) इस ऋचा को वीणा पर गावें। तथा मन्त्र में आये (असौ) पद के स्थान में जिस नदी के समीप रहते हों उसका नाम लेवें ॥६॥ फिर जिन में अंकुर निकलता हो ऐसे यवों को सूत के धागा में पोह कर पत्नी के शिर में बांध देवे और इसी समय से नक्षत्र दीखने तक पति पत्नी दोनों मौन हो जावें ॥७॥ नक्षत्रों का उदय होने पर पूर्व वा उत्तर दिशा में कोठे से निकल कर बछड़े का स्पर्श कर तथा तीन व्याहृतियों का जप करके वाणी का विसर्जन करें ॥८॥

पुंसवनं व्यक्ते गर्भे तिष्येण ॥९॥ न्यग्रोधस्य या प्राच्युदीची वा शाखा ततः सवृषणां शुङ्गामाहृत्य सीमन्तवदग्नेरुपसमाधानादि॥१०॥ अनवस्नातया कुमार्या दृषत्पुत्रे दृषत्पुत्रेण पेषयित्वा परिप्लाव्यापरेणाग्निं प्राचीमुत्तानां निपात्योत्तरेण यजुषाऽङ्गुष्ठेन दक्षिणे नासिकाच्छिद्रे पिनयति ॥ ११॥ पुमांसं जनयति ॥ १२ ॥ क्षिप्रं सुवनम् ॥ १३ ॥ अनाप्रीतेन शरावेणानुस्रोतसमुदकमाहृत्य पत्तस्तूर्यन्तीं निधाय मूर्धञ्छोष्यन्तीमुत्तरेण यजुषाभिमृश्यैताभिरद्भिरुत्तराभिरवोक्षेत॥१४॥

भा०:—जिस से पुमान् नाम पुत्र उत्पन्न हो कन्या न हो उस कर्म का नाम पुंसवन है। जब प्रसिद्धि में गर्भ प्रतीत होने लगे तब प्रथम गर्भ में ही जिस दिन तिष्य नक्षत्र हो उसी दिन करे ॥ ९ ॥ वट वृक्ष की पूर्व वा उत्तर को जो शाखा निकली हो उस में से दो फलों वाले अग्रभाग अंकुर को लाकर सीमन्त के तुल्य अग्नि प्रज्वलनादि परिषेचनान्त काम करे ॥१०॥ जो रजस्वला न हुई हो ऐसी क्वारी कन्या से पत्थर के शिल बटने पर बटवा के वस्त्र से अरक निकाल के अग्नि से पश्चिम में पूर्व को शिर कर पत्नी को सीधी लिटा के (पुंसवनमसि०) मन्त्र पढ़ के अंगूठे से पत्नी के दहिने नासिकाछिद्र में तीन बिन्दु पिलादेवे ॥ ११॥ ऐसा करने से पत्नी पुत्र को उत्पन्न करती है ॥ १२ ॥ जिस से देर तक पीड़ा न हो शीघ्र प्रसूति हो जावे उस कृत्य को आगे बताते हैं ॥ १३ ॥ कोरे शराव— सकोरा (सरवा) से जिधर को नदी का प्रवाह बह रहा हो उधर को झुकता जल भर के लावे और तूर्यन्ती नामक ओषधि को मूल पत्तों सहित लाकर पत्नी के पगों में रक्खे। तथा शोष्यन्ती नामक ओषधी को मूल पत्तों सहित लाके शिर पर रक्खे (आभिष्ट्वाऽहंदशभिरभिमृशामि०) मन्त्र पढ़ के मुख से लेकर नीचे को दोनों हाथ से पत्नी का उक्त मन्त्रसे शिरमें स्पर्श करे फिर (यथैव सोमः पवते०) इत्यादि तीन ऋचाओं को पढ़२ के सरावे में लाये जलसे सेचन करे। कोई लोग ऐसा अर्थ करते हैं कि तूर्यन्ती ओषधि को पगों में धर के पीड़ा से सूखती हुई पत्नी का उक्त मन्त्र

यदि जरायु न पतेदेवं विहिताभिरेवाद्भिरुत्तराभ्यामवोक्षेत् ॥ १५ ॥ इति चतुर्दशः खण्डः ॥

जातं वात्सप्रेणाभिमृश्योत्तरेण यजुषोपस्थ आधायोत्तराभिरभिमन्त्रणं मूर्द्धन्यवघ्राणं दक्षिणे कर्णे जापः ॥ १ ॥ नक्षत्रनाम च निर्दिशति ॥ २ ॥ तद्रहस्यं भवति ॥ ३ ॥ मधुघृतमिति संसृज्य तस्मिन्दर्भेण हिरण्यं निष्टर्क्यं बद्ध्वावधायोत्तरैर्मन्त्रैः कुमारं प्राशयित्वोत्तराभिः पञ्चभिः स्नापयित्वा दधिघृतमिति संसृज्य कांस्येन पृषदाज्यं व्याहृतीभिरोंकार-

से शिर में स्पर्श करे ॥ १४ ॥ यदि बालक पैदा हो जाय और जरायु न गिरे किन्तु गर्भाशय में ही रह गया हो तो उक्त प्रकार सरावे में लाये जल से (तिलदेव पद्यस्व० । निरैतु पृश्नि०) ये दो मन्त्र पढ़ के पत्नी का सेचन करे ॥ १५ ॥ यह चौदहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः-उत्पन्न हुए बालकका वत्सप्री ऋषि के देखे (दिवस्परि०) इत्यादि अनुवाक को पढ़कर स्पर्श करके (अस्मिन्नहं०) इस मन्त्र से अपनी गोदी में लिटावे फिर (अङ्गादङ्गात्०) मन्त्र से अभिमन्त्रण करके (अश्मा भव०) मन्त्र पढ़ के मूर्द्धा को सूंघे और (मेधान्ते०) मन्त्र का दहिने कान में जप करे ॥ १ ॥ जप मन्त्र के अन्त में जो (असौ) पद है उस के स्थान में बालक का नक्षत्र नाम धीरे से बोले (यथा फल्गुन्यां जातः फल्गुनः) ॥ २ ॥ वह नक्षत्र नाम तथा जो दश वें दिन नाम रक्खा जावे ये दोनों नाम जात कर्म में सूक्तवाक के पाठ में अन्नप्राशन में और अभिवादनादि के समय सदा गुप्त रक्खे धीरे से बोले अर्थात् प्रत्येक समय बोलने के लिये कोई अन्य यथेच्छ नाम रख लेवे ॥ ३ ॥ कांसे के पात्र में सहत घी दोनों मिला के उस में निष्टर्क्य नामक सुवर्ण को दाभ से बांध कर पात्र में रख के (त्वयिमेधां०) इत्यादि तीन मन्त्रों से प्रति मन्त्र बालक को चटावे फिर (क्षेत्रियैत्वा०) इत्यादि पांच मन्त्रों से प्रतिमन्त्र स्नान करा के दही और घी मिला ने से बने पृषदाज्य को ओंकार जिन में चौथा हो ऐसे व्याहृतिमन्त्रों को पढ़ २ के कांसे के पात्र

चतुर्थीभिः कुमारं प्राशयित्वाऽद्भिः शेषं संसृज्य गोष्ठे निनयेत् ॥४॥ उत्तरया मातुरुपस्थ आधायोत्तरया दक्षिणं स्तनं प्रतिधाप्योत्तराभ्यां पृथिवीमभिमृश्योत्तरेण यजुषा संविष्टम् ॥५॥ उत्तरेण यजुषा शिरस्त उदकुम्भं निधाय सर्षपान्फलीकरणमिश्रानञ्जलिनोत्तरैस्त्रिस्त्रिः प्रतिस्वाहाकारं हुत्वा संशास्ति प्रविष्टेप्रविष्टएव तूष्णीमग्नावावपतेति ॥ ६ ॥ एव महरहरानिर्दशतायाः ॥ ७ ॥ दशम्यामुत्थितायां पुत्रस्य नाम दधाति पिता मातेति ॥ ८॥ द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा नाम

से बालक को चटावे बाकी बचे पृषदाज्य में जल मिलाकर गोशाला में गिरा देवे ॥४॥ (माते कुमार०) इस ऋचा को पढ़ के माता की गोदी में बालक को लिटाकर (अयं कुमारः०) इस ऋचा द्वारा दहिनास्तन बच्चे के मुख में दिलाके (यद् भूमेर्हृदयम्०) इत्यादि दो ऋचाओं से भूमि का स्पर्श कर के उस भूमि पर बालक को लिटावे और लेटे हुए बच्चे को (नामयति न रुदति०) इसमन्त्र से स्पर्श करे ॥५॥ जिस कमरे में उत्पन्न हुआ बालक लिटाया जाय उस के शिर की ओर एक जल भरा घड़ा (आपः सुप्तेषु०) मन्त्र पढ़के धरे फिर भूसी मिली सरसों की (अयंकलिः०) इत्यादि आठ मन्त्रों से प्रत्येक स्वाहार के अन्त में तीन २ आहुति देवे। एक २ मन्त्रसे, दो २ तूष्णीम्। सूति का घर के दरवाजे पर अग्नि प्रति सदा जागता रहे उसी अग्नि में यह होम किया जायगा। और सूतिका घर के द्वारपालों को शिक्षा करे कि जब २ कोई भीतर जावे तभी २ बिना मन्त्र पढ़े तीन बार अग्नि में भूसी मिली सरसों छोड़ा करो ॥ ६ ॥ इस प्रकार नित्य २ दश दिन तक द्वार पालों को करना चाहिये ॥ ७ ॥ इस प्रकार जात कर्म कहने बाद नाम करण कहते हैं। दशवें दिन उठा कर सूतिका को स्नान कराना चाहिये नव दिन उसी घर में रहे। दशवें दिन उठ कर सूतिका के स्नान कर लेने पर बच्चे का जो नाम रक्खे उस को प्रथम पिता माता बोलें ॥ ८ ॥ नाम दो अक्षर का हो वा चार अ-

पूर्वमाख्यातोत्तरं दीर्घाभिनिष्टानान्तं घोषवदाद्यन्तरन्तस्थम् ॥ ९ ॥ अपिवा यस्मिन् स्वित्युपसर्गः स्यात्तद्धि प्रतिष्ठितमिति हि ब्राह्मणम् ॥ १० ॥ अयुजाक्षरं कुमार्याः ॥११॥ प्रवासादेत्य पुत्रस्योत्तराभ्यामभिमन्त्रणं मूर्द्धन्यवघ्राणं दक्षिणे कर्णे उत्तरान्मन्त्रोऽजपेत् ॥ १२ ॥ कुमारीमुत्तरेण यजुषाऽभिमन्त्रयते ॥ १३ ॥ १५ इति पञ्चदशः खण्डः ॥

जन्मनोऽधिषष्ठेमासि ब्राह्मणान्भोजयित्वाऽऽशिषो वा-

पर का हो जिसका पूर्व पद सुबन्त और उत्तर पद आख्यात प्रधान हो जिस में दीर्घ वर्ण से परे विसर्जनीय हों वर्गों के तृतीय चतुर्थ अक्षर जिस के आदि में हों और यरलव अन्तःस्थ वर्ण जिस के मध्य में हों ऐसे नामों के उदाहरण ये हैं (दिवं नयति-द्युनीः । गाःनयते गोनीः । गाः प्रीणाति गोप्रीः । हिरण्यदाः) सभी लक्षण संघटित हों यह आशय सूत्रकार का नहीं किन्तु कोई लक्षण इन में से अवश्य हो पर अधिक लक्षण मिले तो और भी अच्छा है ॥ ९ ॥ अथवा ब्राह्मण श्रुति में लिखे अनुसार जिन में सु—यह उपसर्ग हो वे (सुयशाः । सुतपाः । सुभद्रः । सुधर्मा । सुमुखः । सुनियमः) इत्यादि नाम प्रतिष्ठित होते हैं वह दीर्घायु यज्ञादि करने वाला होता है ॥ १० ॥ कन्या का नाम (सुमित्रा । यशोधा । सुभद्रा । सुलक्षा) इत्यादि विषमाक्षरों वाला हो ॥ ११ ॥ विदेश से आकर (अङ्गादङ्गा०) इत्यादि दो मन्त्रों से पुत्र का अभिमन्त्रण तथा इन्हीं मन्त्रों से मूर्द्धा सूंघे तथा (अग्निरायुष्मान्०) इत्यादि पांच मन्त्रों का कान में जप करे । असौ के स्थान में संबुद्ध्यन्त नाम लेवे ॥ १२ ॥ (सर्वस्मादात्मनः०) इस मन्त्र से कन्या कुमारी का केवल अभिमन्त्रण करे किन्तु मूर्द्धा में अवघ्राण और कान में जप न करे ॥ १३ ॥ यह १५ पन्द्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भावार्थः—जन्म दिन से लेकर छठे महिने बच्चे का अन्नप्राशन संस्कार करे । ब्राह्मणों को भोजन कराके तथा स्वस्ति पुण्याह वाचन ब्राह्मणों द्वारा कराके दही शहद घी और भात को मिलाकर (भूरपाम्०) इत्यादि चार

चयित्वा दधिमधुघृतमोदनमिति संसृज्योत्तरैर्मन्त्रैः कुमारं प्राशयेत् ॥१॥ तैत्तिरेण मांसेनेत्येके ॥ २ ॥ जन्मनोऽधितृतीये वर्षे चौलं पुनर्वस्वोः ॥ ३ ॥ ब्राह्मणानां भोजनमुपायनवत् ॥ ४ ॥ सीमन्तवदग्नेरुपसमाधानादि ॥ ५ ॥ अपरेणाग्निं प्राङ्मुपवेश्य त्रेण्या शलल्या त्रिभिर्दर्भपुञ्जीलैः शलालुग्लप्सेनेति तूष्णीं केशान् विनीय यथर्षि शिखा निदधाति ॥ ६ ॥ यथा वैषां कुलधर्मः स्यात् ॥ ७ ॥ अपां संसर्जनाद्याकेशनिधानात्समानम् ॥ ८ ॥ क्षुरं प्रक्षाल्य निदधाति ॥ ९ ॥ तेन त्र्यहं कर्म निवृत्तिः ॥ १० ॥ वरं ददाति ॥ ११ ॥ एवं गोदानमन्यस्मिन्नपि नक्षत्रे षोडशे वर्षे ॥१२॥

मन्त्रों से प्राशन करावे ॥ १ ॥ किन्हीं आचार्यों का मत है कि तीतर पक्षी के मांस से अन्नप्राशन करावे (यह मत सर्व देशी नहीं और किसी खास काल में किसी मांसाहारी के लिये यह काम हो सकता है) ॥ २ ॥ जन्म दिन से लेकर तीसरे वर्ष पुनर्वसु नक्षत्र में चूड़ा कर्म संस्कार करे ॥ ३ ॥ ब्राह्मणों को भोजन तथा स्वस्ति पुण्याह वाचन कराके बालक को भोजन करावे ये काम उपनयन के तुल्य यहां भी करे ॥ ४ ॥ फिर अग्नि के प्रज्वलन से लेकर परिषेचन पर्यन्त कर्म सीमन्त में कहे अनुसार करे अन्वारम्भ यहां बालक करेगा ॥ ५ ॥ अग्नि से पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठा के तीन जगह श्वेत सेही के कांटे दाभ के तीन गुच्छे और गूलर के कच्चे फलों वाले गुच्छे (तीनों को एकत्र कर) से शिखा के और काटने के केशों को तूष्णीं बिना मन्त्र पढ़े अलग २ करके तीन वा पांच जितने प्रवर ऋषि हैं उतनी शिखा-चोटी छोड़े ॥ ६ ॥ अथवा लड़के के पूर्वज पिता पितामहादि का जैसा कुलधर्म परम्परा से चला आता हो वैसा ही एक वा अधिक शिखा रखवावे ॥ ७ ॥ खं० १० सू० ५—से ८ तक में कहा शीत उष्ण जल मिलाने से लेकर केश धरने तक कृत्य यहां भी वैसा ही जानो ॥ ८ ॥ फिर छुरे को धोके धर देवे ॥ ९ ॥ उस छुरासे तीन दिन तक किसी की हजामत न करे ॥ १० ॥ यदि चूड़ा कर्म कराने वाला पिता से भिन्न पुरोहितादि हो तो उसे गोदान देवे ॥ ११ ॥ जैसे चोटी छेक के हजामत विधि सहित कराना तथा ब्राह्मण

अग्निगोदानो वा स्यात् ॥ १३ ॥ संवत्सरं गोदानव्रतमित्येक उपदिशन्ति ॥ १४ ॥ एतावन्नाना सर्वान्केशान्वापयते ॥ १५ ॥ उदकोपस्पर्शनमिति छन्दोगाः ॥ १६ ॥ १६ इति षोडशः खण्डः ६ षष्ठःपटलः समाप्तः ॥

दक्षिणाप्रत्यक्प्रवणमगारावकाशमुद्धत्य पालाशेन शमीमयेन वोद्धहेत्तैतामेव दिशमुत्तरयोद्धहति ॥१॥ एवं त्रिः ॥२॥ कृप्तमुत्तरयाऽभिमृश्य प्रदक्षिणं स्थूणागर्त्तान्खानयित्वाऽभ्यन्तरं पांसूनुदुप्योत्तराभ्यां दक्षिणां द्वारस्थूणामवदधाति ॥३॥

भोजन से लेके गोदान पर्यन्त काम यहां होता है वैसे ही रोहिणी आदि नक्षत्र में तथा सोलहवें वर्ष केशान्त संस्कार में भी कर्त्तव्य है ॥ १२ ॥ अथवा अग्नि नाम ब्रह्मचारी के लिये जिस का गोदान हो ऐसा यजमान हो । इस पक्ष में आज्यभाग पर्यन्त कृत्य करलेने पर (अग्नये क्षायद्दर्षये स्वाहा) मन्त्र से एक प्रधान आहुति देकर जयादि गोदान पर्यन्त करे । अथवा अग्नि देवता वाला गोदान कर्म करे ॥ १३ ॥ कोई आचार्य गृह्यसूत्रकार गोदान व्रत को १ वर्ष तक ब्रह्मचर्य के साथ वर्त्तव्य कहते हैं ॥ १४ ॥ इस गोदान कर्म में चूड़ा कर्म से इतना भेद है कि चौल कर्म में शिखा छोड़ी जाती है और गोदान में शिखा सहित सब केश मुंडाये जाते हैं ॥ १५ ॥ इस गोदान में नित्य २ जल स्पर्श तथा एक बार स्नान करे यह साम वेदियों का मत है॥१६॥ यह सोलहवां खण्ड तथा छठा पटल समाप्त हुआ ॥ १६ ॥ ६ ॥

अब इस सत्रहवें खण्ड में शाला कर्म और मणिकाधान दिखाते हैं। जिस जगह में घर बनाना हो वह नैर्ऋत्य कोण की ओर झुकता हो। उस अगारावकाश नाम घर बनाने की जगह को खोदे जिस से धूलि उठ आवे उस धूलि को ढाक वा छयों कर की लकड़ी से सकेले फिर (यद्भूमेःक्रूरम्०) इस ऋचा से नैर्ऋत्य दिशा में ही उस धूलि को फेंके ॥ १ ॥ इस प्रकार तीन बार खोद २ के धूलि सकेले और फेंके जिस से सम चौरस जगह हो जावे॥२॥ ठीक की हुई जगह को (स्योना पृथिवि०) मन्त्र से स्पर्श करके खम्भ गाड़ने के गड़ों को प्रदक्षिण क्रम से खुदवा के तथा भीतरी मध्य के गड़े को भी खुदवा के गड़ों से मट्टी निकाल कर (इहैवतिष्ठ०) इत्यादि दो मन्त्रों से द्वार के दक्षिण खम्भ को गर्त्त में धरे अर्थात् निकलते समय जो दहिनी ओर गर्त्त हो उस में प्रथम धरे खोदने का क्रम द्वार स्थूणा रखने में अपेक्षित नहीं है ॥ ३ ॥

एवमितराम् ॥ ४ ॥ यथाखातमितरा अन्ववधाय वंशमाधीयमानमुत्तरेण यजुषाऽभिमन्त्रयते ॥ ५ ॥ संमितमुत्तरैर्यथालिङ्गम् ॥ ६ ॥ पालाशं शमीमयं वेध्ममादीप्योत्तरयाऽग्निमुद्धृत्योत्तरेण यजुषाऽगारं प्रपाद्योत्तरपूर्वदेशेऽगारस्योत्तरयाऽग्निं प्रतिष्ठापयति ॥ ७ ॥ तस्माद्दक्षिणमुदधानायतनं भवति ॥ ८ ॥ तस्मिन् विषूचीनाग्रान्दर्भान्संस्तीर्य तेषूत्तरया व्रीहियवान्न्युप्य तत्रोदधानं प्रतिष्ठापयति ॥ ९ ॥ तस्मिन्नुत्तरेण यजुषा चतुरउदकुम्भानानयति ॥ १० ॥ दीर्णमुत्तरयाऽनुमन्त्रयते ॥ ११ ॥ अग्नेरुपस-

---

फिर उन्हीं उक्त दो मन्त्रों से बायें गर्त्त में भी स्थूणा रक्खे ॥ ४ ॥ शेष गर्त्तों में खोदने के क्रम से तूष्णीं बिना मन्त्र स्थूणा रख के सब स्थूणाओं पर वांस धरे जाते हुओं को (ऋतेन स्थूणा०) मन्त्र से अभिमन्त्रण करे ॥५॥ सम्यक् लगाए हुए घरका(ब्रह्म च ते क्षत्रम्०)इत्यादि छः मन्त्रोंसे अभिमन्त्रण यथालिङ्ग करे। अर्थात् घरके जिस हिस्सेका वर्णन जिस मन्त्रमें हो उससे उसी भाग का अभिमन्त्रण करे ॥६॥ढांक वा छोंकरकी बहुतसी समिधा इकट्ठी करके प्रज्वलित करे उस प्रज्वलित अग्नि को पात्र में (उद्ध्रियमाण०) इस पांचपाद की ऋचा से उद्धरण करके (इन्द्रस्य गृहावसुमन्त०) मन्त्र से उस अग्नि को लेकर घर में प्रवेश करे फिर (अमृताहुतिम्०) इस ऋचा को पढ़के घर के ईशान कोण में (जहां पहिले से कुण्ड बनाया हो उस में) अग्नि को स्थापित करे। नये घर में प्रवेश करने की यही उक्तरीति है। यदि खं० ६ सू० १० में कहे अनुसार विवाहाग्नि का स्थापन न किया हो तो यहां कहे प्रकार से स्थापित हो औपासन अग्नि होगा ॥ ७ ॥ अब आगे मणिकावधान का विचार लिखते हैं। अग्नि कुण्ड से दक्षिण में मणिक स्थापन का स्थान नियत करे ॥८॥ उस जगह में सब ओर अग्रभागकर २ कुश बिछाके उन कुशों पर (अन्नपते०) इस ऋचा से जौ और धानों को बोकर [बिखेर कर] उस पर मणिक को स्थापित करे ॥ ९ ॥ उस मणिक पर (अरिष्टा अस्माकं०) मन्त्र को चार वार पढ़ २ के जल भरे चार घड़े लावे ॥१०॥ यदि वह मणिक नाम मटका वा कूंडा फूट जावे तो (भूमिर्भूमिम्०) इस मन्त्र से अनुमन्त्रण करे ॥ ११ ॥ फिर खं

माघानाद्याज्यभागान्त उत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादि प्रतिपद्यते ॥ १२ ॥ परिषेचनान्तं कृत्वोत्तरेण यजुषोदकुम्भेन त्रिः प्रदक्षिणमन्तरतोऽगारं निवेशनं वा परिषिच्य ब्राह्मणान् भोजयेदपूपैः सक्तुभिरोदनेनेति ॥ १३ ॥ इति सप्तदशः खण्डः समाप्तः ॥

श्वग्रहगृहीतं कुमारं तपोयुक्तो जालेन प्रच्छाद्य कंसं किङ्किणीं वा ह्रादयन्नद्वारेण सभां प्रपाद्य सभाया मध्येऽधिदेवनमुद्धत्यावोक्ष्याक्षान्न्युप्याक्षेषूत्तानं निपात्य दध्ना लवणमिश्रेणाञ्जलिनोत्तरैरवोक्षेत्प्रातर्मध्यन्दिने सायम् ॥ १ ॥

१ । २ में कहे अग्नि के प्रज्वलन से लेकर आज्यभाग पर्यन्त कृत्य कर लेने पर (वास्तोष्पते०) इत्यादि चार प्रधानाहुति करके खं० २ सू० ७ में कही जयादि होम की ५८ अट्ठावन आहुति करे ॥१२॥ खं० २ सू० ३ में कहा परिषेचन पर्यन्त कर्म करके (शिवशिवं०) इस मन्त्र को पढ़ के एक वार ग्रहण किये एक जल के घड़े से भीतर घर को वा शयन स्थान को तीनवार तीन प्रदक्षिणा कर २ परिषेचन करे फिर उस घर में मालपूआ सत्तू और भात का ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १३ ॥ यह सत्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भा०—इस खण्ड में प्रथम बालग्रह निवृत्ति का उपाय कहते हैं। जिस पिशाच ग्रह से पकड़ा हुआ बालक कुत्ते कीसी चेष्टा करे भूंके उस को श्वग्रह जानो उसे कोई धर्मात्मा विद्वान् ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय रहता हुआ मछली पकड़ने के जाल से ढांप कर कांसे का घंटा वा किंकिणी—क्षुद्रघण्टिका छोटी२ घंटुरियों का झुनझुना बजवाता हुआ विना द्वार के किसी छप्पर आदि में नया छिद्र करके उस के द्वारा द्यूतशाला [जुआघर में] लावे। द्यूतसभा के बीच जुआ खेलने के स्थान को कुछ खोद के किंचित् मट्टी नैर्ऋत्य कोण में फेंक दे फिर जल से सेचनकर वहां पांसे बिछाके उन पर बालक को चित्त लिटा कर लवण मिले दही को हाथ में ले२ कर (कूर्कुरः सु०) इत्यादि ग्यारह मन्त्रों से प्रति मन्त्र बालक पर छींटा लगावे इस कर्म को सायंप्रातः और मध्याह्न में तीनवार करे॥१॥

अगदो भवति ॥२॥ शङ्खिनं कुमारं तपोयुक्त उत्तराभ्यामभिमन्त्र्योत्तरयोदकुम्भेन शिरस्तोवनयेत्प्रातर्मध्यन्दिनेसायम् ॥ ३ ॥ अगदो भवति ॥४॥ श्रावण्यां पौर्णमास्यामस्तमिते स्थालीपाकः ॥ ५ ॥ पार्वणवदाज्यभागान्ते स्थालीपाकाद्धुत्वाऽञ्जलिनोत्तरैः प्रतिमन्त्रं किंशुकानि जुहोति ॥६॥ उत्तराभिस्तिसृभिरारग्वधमय्यः समिधः ॥ ७ ॥ आज्याहुतीरुत्तराः ॥ ८ ॥ जयादि प्रतिपद्यते ॥ ९ ॥ परिषेचनान्तं कृत्वा वाग्यतः संभारानादाय प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनि-

तो बालक नीरोग हो जाता है ॥ २ ॥ जिस से पकड़ा बालक शंख के तुल्य बोले उस शंख पिशाचग्रह ग्रस्त बच्चे को कोई तपस्वी वेदवेत्ता विद्वान् (एतेते प्रतिहरयेते०) दो मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके जल के घड़े से (ऋषिर्बोधः प्रबोध०) इस ऋचा को पढ़ के बालक के शिर पर सायं प्रातः मध्याह्न में तीनों काल जल सेचन करे ॥३॥ तो नीरोग हो जाता है ॥४॥ अब आगे सर्प बलि नामक कर्म जो प्रति संवत्सर में कर्त्तव्य है उस का व्याख्यान लिखते हैं। इस कर्म का श्रावण की पौर्णमासी को आरम्भ और मार्गशीर्ष की पौर्णमासी को उत्सर्ग होता है श्रावण की पौर्णमासी को सूर्यास्त होने पश्चात् स्थालीपाक करे ॥५॥ खं०७सू० २।३ में कहे अनुसार यहां भी स्थालीपाक बना के अग्नि प्रज्वलन से आज्यभागान्त कर्म करलेने पर (श्रावण्यै पौर्णमास्यै स्वाहा) मन्त्र से स्थाली पाक का होम करके। (जाधो मशकः०) इत्यादि तीन मन्त्रों से प्रति मन्त्र ढांक के फूलों का हाथ से ही होम करे। यहां किंशुक पद से ढांक के सदृश कांटे वाले किसी वृक्ष के फूल कोई भाष्यकार लेते हैं ॥ ६ ॥ (इन्द्रजहिदन्दशूकं०) इत्यादि तीन ऋचाओं से अमलतास वृक्ष की तीन प्रादेश मात्र समिधा अग्नि में चढ़ावे ॥ ७ ॥ (तत्सत्यंयत्तेऽमावास्यायाम्०) इत्यादि चार मन्त्रों से घी की चार आहुति करे ॥ ८ ॥ इस प्रकार प्रधान होम की ग्यारह आहुति कर के स्थालीपाक से ही एक स्विष्टकृत् आहुति देके जयादि होम की ५८ आहुति घी से करे ॥ ९ ॥ खं० २ सू० ३ में कहा परिषेचन पर्यन्त कर्म करके मौन हुआ कार्य कर्त्ता अक्षविहत सत्तू भूंजे जौ धान

ष्क्रम्य स्थण्डिलं कल्पयित्वा तत्र प्राचीरुदीचीश्च तिस्रस्तिस्रो लेखा लिखित्वाऽद्भिरुपनिनीय तासूत्तरया सक्तून्निवपति ॥१०॥ तूष्णीं संपुष्का धाना लाजानाञ्जनाभ्यञ्जने स्थगरोशीरमिति ॥ ११ ॥ उत्तरैरुपस्थायाऽपः परिषिच्याप्रतीक्षस्तूष्णीमेत्यापश्वेतपदेत्येताभ्यामुदकुम्भेन त्रिः प्रदक्षिणमन्तरतोऽगारं निवेशनं वा परिषिच्य ब्राह्मणान् भोजयेत् ॥ १२ ॥ १८ अष्टादशः खण्डः ॥

धानाः कुमारान्प्राशयन्ति ॥ १ ॥ एवमतऊर्ध्वं यदशनीयस्य सक्तूनां वैतं बलिं हरेदामार्गशीर्ष्याः ॥ २ ॥ मार्ग-

की खीलें सत्तू अंजन अभ्यञ्जन स्थगर और खस खस एक जल पात्र इस सब सामान को लेकर घर वा ग्राम सेपूर्व वा उत्तर दिशा में बाहर निकल कर शुद्ध जंगल में चौकोन भूमि को लीप कर उसमें प्रथम पूर्व को फिर उत्तर को तीन २ रेखा कर के उन रेखाओं को जल सेचन द्वारा परस्पर संबद्ध करके उन रेखाओं पर (नमोअस्तु सर्पेभ्यो०) मन्त्र पढ़ के हाथ वा करछी से सत्तू की बली धरे ॥ १० ॥ फिर भुंजे जौके अखंडित धाना धान की खीलें अंजन अभ्यञ्जन स्थगर और खस खस इन चीजों को तूष्णीं स्थण्डिल पर धरे। इस प्रकार सत्तू आदि सात वस्तुओं का बली देवे ॥ ११ ॥ फिर (तक्षक वैशालेय०) इत्यादि पांच मन्त्रों से बलि देवता का उपस्थान करके बलि पर जल सेचन फिर पीछे को लौट कर न देखता हुआ तूष्णीं वहां से लौट कर (अपश्वेतपदा०) इत्यादि दो ऋचा पढ़ के जल भरे घड़े से घर के भीतर वा सोने के स्थान को सेचन करके स्थालीपाक के शेष बचे अन्नादि से ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १२ ॥ यह अठारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भा०—सर्प बलि से शेष बचे भुंजे जौ कुंवारे लड़कों को जिमावे ॥ १ ॥ खं० १८ के १०—से १२ तक सूत्रों में कहे अनुसार ठीक २ ज्यों के त्यों विधान से भोजन के लिये जो पदार्थ बने उस का वा सत्तू का प्रतिदिन चार महीने तक सर्पबलि किया करे अर्थात् श्रावण की पौर्णमासी से लेकर मार्ग शीर्ष की पौर्णमासी तक चार महीना इस कर्म का समय है। जैसे यहां सूर्यास्त होने पर बलिदान कहा है वैसे ही नित्य २ करे ॥२॥ जैसा श्रावण की पौर्णमासी में

शीर्ष्यां पौर्णमास्यामस्तमिते स्थालीपाकः ॥ ३ ॥ अहार्षमिति बलिमन्त्रस्य संनामः ॥ ४ ॥ अत्रैनमुत्सृजति ॥ ५ ॥ अनाहिताग्नेराग्रयणम् ॥ ६ ॥ नवानां स्थालीपाकं श्रपयित्वाऽऽग्रयणदेवताभ्यः स्विष्टकृच्चतुर्थाभ्यो हुत्वा तण्डुलानां मुखं पूरयित्वा गीर्त्वाचम्योदनपिण्डं संवृत्योत्तरेण यजुषाऽगारस्तूप उद्वृहेत् ॥ ७ ॥ हेमन्तप्रत्यवरोहणम् ॥ ८ ॥ उत्तरेण यजुषा प्रत्यवरुह्योत्तरैर्दक्षिणैः पार्श्वैर्नवस्वस्तरे संविशन्ति ॥ ९ ॥ दक्षिणः पितोत्तरा मातैवमवशिष्टानां ज्ये-

---

किया वैसा ही मार्गशीर्ष की पौर्णमासी का सूर्यास्त होने पर स्थालीपाक बनावे यहां (मार्गशीर्ष्यै पौर्णमास्यै स्वाहा) मन्त्र से स्थालीपाक का होम करे अन्य सब कृत्य पूर्ववत् जानो ॥ ३ ॥ बलि देवता के उपस्थान के पांच मन्त्रों में आये (बलिंहरिष्यामि) के स्थान में (बलिमहार्षम्) ऐसा ऊह करे ॥ ४ ॥ इस मार्गशीर्षी पौर्णमासी के दिन इस सर्पबलि कर्म का उत्सर्ग समाप्ति कर देवे ॥ ५ ॥ (नवान्नेष्टिः) अब यहां से आगे अनाहिताग्नि (जिसने विधि पूर्वक अग्नि स्थापन नहीं किया उस) पुरुष के लिये आग्रयण नाम नवान्नेष्टि कर्म का विधान कहते हैं॥६॥ अग्र नाम नया चावल वा जौ जिसमें देवताओं को दिया जाय उसका नाम आग्रयण कर्म है। ख० १ सू० २३ में कहे अनुसार कार्त्तिक में चावल का और फाल्गुन में जौ का स्थालीपाक बना के अग्नि प्रज्वलन से आज्यभाग पर्यन्त कर्म कर लेने पर (१—इन्द्राग्निभ्यां स्वाहा। २—विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ३—द्यावापृथिवीभ्यांस्वाहा) ये तीन प्रधान आहुति करे फिर खं०२सू०७ में कही (यदस्यकर्मणो०) स्विष्टकृत् आहुति देवे ये चारो आहुति स्थालीपाक से करके शेष बचे भात में से भात को अपने मुख में भर के निगल जावे फिर आचमन करके शेषबचे भातका गोल पिण्ड बना के (परमेष्ठ्यसि०) मन्त्रसे ऊपर को फैंके जो बंडेरा में वा कड़ीमें जाकर लगे ॥७॥ (अथ स्रस्तरारोहणम्) हेमन्त ऋतु लगते ही खटिया छोड़ के धान के पलाल का बिछौना बिछा के उस पर सोना आरम्भ करे ॥ ८ ॥ (प्रत्यवरूढोनोहेमन्तः०) इस मन्त्र को पढ़ के खटिया से उतर कर (प्रतिक्षत्र०) इत्यादि पांच मन्त्र पढ़ के पलाल के नये बिछौना पर दहिने करवट से घर के सब स्त्री पुत्र कन्यादि लेटें ॥ ९ ॥ यह स्रस्तरारोहण कर्म जिस दिन हेमन्त ऋतु लगे उसी

ष्ठोज्येष्ठोऽनन्तरः ॥ १० ॥ संहायोत्तराभ्यां पृथिवीमभिमृशति ॥ ११ ॥ एवं संवेशनादि त्रिः ॥ १२ ॥ ईशानाय स्थालीपाकं श्रपयित्वा क्षैत्रपत्यं च प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्य स्थण्डिलं कल्पयित्वाऽग्नेरुपसमाधानादि ॥१३॥ अपरेणाग्निं द्वे कुटी कृत्वा ॥ १४ ॥ इति १९ खण्डः ॥

उत्तरया दक्षिणस्यामीशानमावाहयति ॥ १ ॥ लौकिक्यावाचोत्तरस्यां मीढुषीम् ॥ २ ॥ मध्ये जयन्तम् ॥ ३ ॥

दिन नित्य के सोने के समय रात्रि को करे । सब से दक्षिण में पिता लेटे उस से उत्तर में माता रहे उस से उत्तर २ में ज्येष्ठ २ रहे अर्थात् सब से छोटा सब से उत्तर में लेटे ॥ १० ॥ फिर लेटे हुये सब एक साथ उठ कर (स्योना-पृथिवि०) इत्यादि दो ऋचा पढ़ के पृथिवी का स्पर्श करें ॥ ११ ॥ इसी प्रकार लेट २ कर तीन बार उठ २ के मन्त्र पूर्वक तीनवार पृथिवी का स्पर्श करें ॥ १२ ॥ यह स्रस्तरारोहण कर्म समाप्त हुआ । (अथेशानबलिः) अब आगे ईशानबलि नामक पाकयज्ञ कहते हैं । इस ईशान बलि कर्म को करना चाहता हुआ औपासन अग्नि में ईशान देवता और क्षेत्रपति देवता के लिये खं० ७ सू० २।३ में लिखे अनुसार उद्वासनान्त दोनों स्थालीपाक अन्न के अभिघारण करके दोनों स्थालीपाक औपासन अग्नि और जो २ वस्तु अपेक्षित हो उन सब के सहित ग्राम से बाहर पूर्व वा उत्तर दिशा में निकल कर शुद्ध स्थान को गोबर से चौकोन लीप कर उस के पूर्व भाग में अग्नि स्थान नियत करके उस में अग्नि का प्रज्वालनादिकर्म आज्यभाग पर्यन्त करे ॥ १३ ॥ फिर अग्नि से पश्चिम में पूर्व वा पश्चिम को जिन के द्वार हों और दक्षिण उत्तर को लम्बाई हो ऐसी दो कुटी देव और देवी के लिये बनावे ॥ १४ ॥ यह १९वां खण्ड समाप्त हुआ ॥

उन में से दहिनी कुटी में महादेव जी की और उत्तर की कुटी में गौरी देवी जी की एक २ प्रतिमा बनावे और बीच में जयन्त नामस्कन्द वा इन्द्रदेव की प्रति कृति बनावे फिर दक्षिण की कुटीस्थ प्रतिमा में (आत्वावहन्तुहरयः०) मन्त्र पढ़ के ईशान देव का आवाहन करे ॥ १ ॥ फिर उत्तर कुटीस्थ गौरी की प्रतिमा में लौकिक वाणी (आयाहिमीढुषि !) से ईशानपत्नी भगवती का आवाहन करे ॥ २ ॥ दोनों कुटी के मध्यस्थ अवकाशस्थ प्रतिमा में

यथोढमुदकानि प्रदाय त्रीनोदनान्कल्पयित्वाऽग्निमभ्यानीयोत्तरैरुपस्पर्शयित्वोत्तरैर्यथास्वमोदनेभ्यो हुत्वा सर्वतः समवदायोत्तरेण यजुषाऽग्निं स्विष्टकृतम् ॥ ४ ॥ उत्तरेण यजुषोपस्थायोत्तरैः सहोदनानि पर्णान्येकैकेन द्वे द्वे दत्त्वा दशदेवसेनाभ्यो दशोत्तराभ्यः ॥ ५ ॥ ॥ पूर्ववदुत्तरैः ॥ ६ ॥ ओदनपिण्डं संवृत्य पर्णपुटेऽवधायोत्तरेण यजुषा वृक्षआसजति ॥ ७ ॥ अत्र रुद्रान् जपेत् ॥८॥ प्रथमोत्तमौ वा ॥९॥

स्कन्द वा इन्द्र देव का आवाहन करे कि (आयाहिजयन्त०) फिर आवहन क्रम से आसन अर्घ्य पाद्यादि द्वारा पूजन कर स्थालीपाक से भात निकाल के तीनों देवता के लिये तीन पात्र व पत्तलों में थोड़ा २ परोस कर उन पात्रों को अग्नि के पास लाकर अग्नि से पश्चिम में कुशों पर रख देवे फिर (उपस्पृशतुमीढ्वान्०) इत्यादि मन्त्रोंसे यथाक्रम तीनोंका स्पर्श करके (भवाय देवाय स्वाहा) इत्यादि आठ मन्त्रों से ईशानदेव के लिये (भवस्यदेवस्यपत्न्यै स्वाहा) इत्यादि आठ मन्त्रों से भगवती देवी के लिये तथा (जयन्ताय स्वाहा) मन्त्रसे जयन्तके लिये होमकरे । इसप्रकार प्रधान होम की सत्रह आहुति करके तीनों देवताके भातसे थोड़ा २ लेकर(अग्नयेस्विष्टकृतेसुहुतहुते०)मन्त्रसे स्विष्टकृत आहुतिदेवे ॥४॥ फिर जयादिहोम की ५८ आहुति घृतकी देके परिषेचनान्त कर्म करके (स्वस्तिनःपूर्णमुख०) मन्त्र से प्रधान देवता महादेव जी का उपस्थान करे फिर (गृहपोपस्पृश०) इत्यादि सात मन्त्रों से भात जिन पर धराहो ऐसे दो २ पत्ते एक २ मन्त्र से भूमिपर धरे (देवसेनाभ्यः०) मन्त्र पढ़के भात सहित दश पत्ते धरे तथा (या आख्याता०) इत्यादि मन्त्र में कही उत्तर देवता वा उत्तर देव सेनाओं के लिये भी (देवसेनाभ्यः) मन्त्र से ही भात सहित दश पत्ते समर्पित करे ॥ ५ ॥ फिर (द्वारापोपस्पृश०) इत्यादि चार मन्त्रोंसे पूर्ववत् भात एक २ मन्त्र से दो २ पत्ते भूमिपर धरे ॥ फिर जयन्त के भात में से दोनों हाथ से एक भात का पिण्ड बना के पत्तोंके दौना में धरके छींके में रखकर (नमोनिषङ्गिणे०) मन्त्र पढ़ के वृक्षपर लटका देवे ॥ ७ ॥ इस समय में (नमस्ते रुद्रमन्यव०) इत्यादिग्यारह अनुवाकों से रुद्रदेवता का उपस्थान करे ॥ ८ ॥ अथवा रुद्रदेवता के पहिले पिछले दोही अनुवाकों का जप करे ॥ ९ ॥ अथवा

अभितएतमग्निं गाः स्थापयति यथैना धूमः प्राप्नुयात् ॥१०॥ ता गन्धैर्दर्भग्रुमुष्टिनाऽवोक्षति वृषाणमेवाग्रे॥११॥ गवां मर्गेऽग्नौ क्षेत्रस्य पतिं यजेत ॥१२॥ ईशानवदावाहनम् ॥१३॥ चतुर्षु सप्तसु वा पर्णेषु नामादेशं दधाति॥१४॥ क्षिप्रं यजेत पाको देवः ॥१५॥ उत्तराभ्यामुपतिष्ठते ॥१६॥ स्थालीपाकं ब्राह्मणान् भोजयेत् ॥ १७॥ क्षैत्रपत्यं प्राश्नन्ति ये सनाभयो भवन्ति ॥१८॥ यथा वैषां कुलधर्मः स्यात्॥१९॥ इति विंशः खण्डः सप्तमः पटलश्च समाप्तः ॥

रुद्र देवता के पहिले पिछले दोही अनुवाकों का जप करे ॥ ९ ॥ होमाग्नि के समीप जिधर को वायु चलता हो उधर अपनी गौओं को खड़ी करे जिस से उन गौओं को होम का धुंआं लगे ॥ १० ॥ उन गौओं को अधिक डाभों की कूंची बना के उस में पिसे हुये सुगन्धित चन्दन केशर कपूरादि भर २ मार्जन करे परन्तु उन में जो बैल हो उस का पहिले प्रोक्षण करे॥ ११॥ फिर गौ चराने वाला गौओं को लेचले तब उन चलती हुई गौओं के मार्गस्थ भूमि में क्षेत्रपति का पूजन करे ॥ १२ ॥ (आत्वा वहन्तु०) मन्त्र से ईशान देव के तुल्य क्षेत्रपति का आवाहन कर अर्घ्यदेके सुगन्ध पुष्पादि से पूजन करे ॥ १३ ॥ फिर स्थालीपाक में थोड़ा घी ऊपर से छोड़कर चार वा सातपत्तों को सामने कल्पित देवप्रतिमा के निकट रखके (क्षेत्रस्य पतये स्वाहा) इत्यादि मन्त्र पढ़ २ के स्थालीपाक से ले २ कर बलि रक्खे ॥ १४ ॥ यह क्षेत्रपति देवता पाक नाम बालकवत् चञ्चल है अधिक देरतक नहीं ठहरता इस लिये इस देव का पूजन शीघ्र करे ॥ १५ ॥ (क्षेत्रस्यपतिनावयम्०) इत्यादि दो मन्त्रों से क्षेत्रपति देव का खड़े होके उपस्थान करे॥१६॥ईशान देव का स्थालीपाक जितना बचा हो (पहिले से अधिक बनावे जिस से भोजनार्थ भात बचजावे) उसे ब्राह्मणों को जिमा देवे ॥ १७ ॥ यजमान के पुत्र पौत्र और सहोदर भाई सब मिल के क्षेत्रपति के शेष बचे स्थालीपाक को खावें ॥ १८ ॥ अथवा यजमान का जैसा कुल धर्म चला आया हो अर्थात् असपिण्ड भी खाते रहे हों तो वे भी खावें ॥१९॥ यह बीसवां खण्ड और सातवां पटल समाप्त हुआ ॥

मासि श्राद्धस्यापरपक्षे यथोपदेशं कालाः ॥ १ ॥ शुचीन् मन्त्रवतो योनिगोत्रमन्त्रासम्बन्धानयुग्मांस्त्र्यवराननर्थावेक्षो भोजयेत् ॥ २ ॥ अन्नस्योत्तराभिर्जुहोति ॥ ३ ॥ आज्याहुतीरुत्तराः ॥ ४ ॥ एतद्वा विपरीतम् ॥ ५ ॥ सर्वमुत्तरैरभिमृशेत् ॥६॥ क्रमान्वा प्रतिपूरुषम् ॥७॥ उत्तरेण यजुषो पस्पर्शयित्वा॥८॥भुक्तवतोऽनुव्रज्यप्रदक्षिणीकृत्य द्वैधं दक्षिणा

भा०—अब यहां से श्राद्ध का विचार चलाया जाता है। महिने २ में कर्त्तव्य श्राद्ध विशेषों के अन्यत्र श्रौतसूत्रादि में कहे तिथि आदि कालविशेष अपर मास कृष्णपक्ष में जानो ॥ १ ॥ शुद्धाचारी वेदपाठी अपने जामातृ दौहित्रादि योनि सम्बन्धी अपने गोत्र वाले तथा अपने ऋत्विज् वा आचार्य वा शिष्य हों ऐसे विषम संख्या वाले तीन आदि ब्राह्मणों को कुछ संसारी प्रयोजन न रखता हुआ भोजन करावे ॥ २ ॥ ब्राह्मण भोजन के लिये बनाये अन्न में से थोड़ा निकाल के उस से (यन्मेमाता प्रलुलुभे०) इत्यादि सात ऋचाओं से सात आहुति करे। उस में पहिली दो ऋचा में पढ़े (अमुष्मै०) के स्थान में पिता का नाम, बीच के दो मन्त्रों में पितामह का और अन्त्य के दो मन्त्रों में प्रपितामह का नाम चतुर्थ्यन्त बोले। यदि पितादि में कोई दो हों तो साथ २ दोनों का नाम बोले ॥ ३ ॥ अन्न होम के पश्चात् (स्वाहापित्रे) इत्यादि छः आहुति घृत की देवे ॥ ४ ॥ अथवा पहिली सात आहुति घी से करे पिछली छः अन्न से यह विकल्पित है ॥ ५ ॥ हविष्यान्न वा लवण सहित जो २ ब्राह्मण भोजनार्थ अन्न बनाया हो उस सब का (एषतेततमधुमान्०) इत्यादि तीन मन्त्र पढ़के स्पर्श करे ॥ ६ ॥ अथवा प्रत्येक पितृ ब्राह्मणादि के लिये पात्रों में परोसे हुए भोज्य पदार्थों का उक्त तीन मन्त्रों से यथाक्रम स्पर्श करे ॥७ ॥ (पृथिवीतेपात्रम्०) इस मन्त्र को पढ़ २ के एक २ पितृ ब्राह्मणादि का हाथ पकड़े ॥ ८ ॥ भोजन करके जाते हुये ब्राह्मणों के पीछे २ यजमान सीमा (धुरे) तक जाके लौटते समय प्रदक्षिणा करे फिर वहां से लौटकर अपसव्य हो के लिपे हुए स्थान में दो जगह बराबर दक्षिण को जिन का अग्र

ग्रान्दर्भानसंस्तीर्य तेषूत्तरैरपो दत्त्वोत्तरैर्दक्षिणापवर्गान् पिण्डान्दत्त्वा पूर्ववदुत्तरैरपो दत्त्वोत्तरैरुपस्थायोत्तरयोदपात्रेण त्रिःप्रसव्यं परिषिच्य न्युब्जपात्राण्युत्तरं यजुरनवानं त्र्यवरार्द्ध्यमावर्त्तयित्वा प्रोक्ष्य पात्राणि द्वंद्वमभ्युदाहृत्य सर्वतः समवदायोत्तरेण यजुषा शेषस्य ग्रासवराध्यं प्राश्नीयात्॥९॥ या माघ्याः पौर्णमास्या उपरिष्टाद्व्यष्टका तस्यामष्टमी ज्येष्ठया संपद्यते तामेकाष्टकेत्याचक्षते ॥ १० ॥ तस्याः सा-

भाग हो ऐसे कुश बिछा के उन पर (मार्जयन्तां ममपितरः) इत्यादि तीन मन्त्रों से जल सेचन करे तथा (मार्जयन्तांममातरः) इत्यादि से मातृसम्बन्धी द्वितीयस्थानी कुशों पर जल सेचन करे उत्तर से दक्षिण की ओर को सींचे फिर (एतत्तेततासौ०) इत्यादि मन्त्रों से पितादि के लिये दक्षिण २ को कुशों पर तीन पिण्ड देवे (असौ) पद के स्थान में पितादि का शर्मान्त नाम बोले फिर मातादि तीनों को भी द्वितीय कुशों पर पिण्ड देके पूर्ववत् क्रम से सब पिण्डों पर प्रत्यवनेजनरूप जल छोड़े और होम के शेष बचे तथा भोजन के शेष बचे हविष्यान्नके पिण्ड बनाना चाहिये। फिर (येचवोऽत्र०) इत्यादि छः मन्त्रों से यथालिङ्ग और यथाक्रम पिता पितामह प्रपितामह तथा माता पितामही प्रपितामही छहों का उपस्थान करे। फिर (पुत्रान् पौत्रान्०) इत्यादि मन्त्र पढ़के जल पात्र से अप्रदक्षिण सब पिण्डों के सब ओर तीन वार जलधारा सेचन कर होम और पिण्डदान के पात्रों को औंधे (अधोमुख) करके (तृप्यत तृप्यत तृप्यत) इस मन्त्र को एकही श्वास में तीन वार पढ़े अर्थात् (तृप्यत) को नौवार कहे बीच में न रुके न श्वास लेवे। फिर उन औंधे किये पात्रों का प्रोक्षण करके एक साथ दो २ के नाम लेकर शेष बचे होमार्थ और पिण्डार्थ अन्न में से एकग्रास मात्र अन्न लेकर (प्राणे निविष्टो०) मन्त्र पढ़के अपसव्य हुआ खालेवे ॥ ९ ॥ इस के पश्चात् पञ्चमहायज्ञ करे। यह श्राद्ध विधि समाप्त हो गयी। अब अष्टका नामक पाकयज्ञ कहते हैं। माघ की पौर्णमासी के पश्चात् फाल्गुन कृष्णपक्ष की अष्टमी दोदिन की होने से व्यष्टका कहाती है उनमें जो ज्येष्ठा नक्षत्र से युक्त अष्टमी होती है उस को एकाष्टका कहते हैं॥ १०॥ उस अष्टमी से पहि-

यमोपकार्यम् ॥ ११ ॥ अपूपं चतुःशरावं श्रपयति ॥ १२ ॥ अष्टाकपालइत्येके ॥ १३ ॥ इत्येकविंशः खण्डः

पार्वणवदाज्यभागान्तेऽञ्जलिनोत्तरयाऽपूपाज्जुहोति ॥१॥ सिद्धः शेषस्तमष्टधा कृत्वा ब्राह्मणेभ्य उपहरति ॥२॥ श्वोभूते दर्भेण गामुपाकरोति पितृभ्यस्त्वा जुष्टामुपाकरोमीति ॥३॥ तूष्णीं पञ्चाज्याहुतीर्हुत्वा तस्यै वपां श्रपयित्वोपस्तीर्णाभिघारितां मध्यमेनान्तमेन वा पलाशपर्णेनोत्तरया जुहोति ॥ ४ ॥ मांसौदनमुत्तराभिः ॥ ५ ॥ पिष्टान्नमुत्तरया ॥ ६ ॥

ले दिन सप्तमी को सायंकाल उपकारक कर्म करना चाहिये ॥ ११ ॥ अष्टमी से पहिले दिन सप्तमी को सूर्यास्त होने पर चार शरावों में अर्थात् एकही में चार खण्ड किये हों ऐसे मट्टी के शरावे में अपूप पकावे ॥१२ ॥ किन्हीं आचार्यों का मत है कि अष्टाकपाल अपूप बनावे। एकही कपाल में आठ कोष्ठ के हों उसमें पकाया अष्टाकपाल अपूप वा पुरोडाश कहाता है। यह दोनों ही पक्ष में औपासनाग्नि में पकाया जायगा पितृकर्म का यह अङ्ग है इससे यहां अपसव्य न होगा ॥ १३ ॥ यह २१ वां खंण्ड पूरा हुआ ॥

खं०७सू०२।३ में कहे अनुसार अभिघारण पर्यन्त कृत्य कर लेने पर आज्यभाग पर्यन्त करके (यां जनाः प्रतिनन्दन्ति०) मन्त्र से अपूपों को अञ्जलि में लेकर होम करे ॥ १ ॥ शेषकृत्य पूर्ववत् सिद्ध जानो अर्थात् कर छी में अवदान लेकर स्विष्टकृत होम करे फिर २१ समिधा चढ़ाके जयादि होम की ५८ आहुति करे फिर शेष बचे पुरोडाश के आठखण्ड करके आठ ब्राह्मणों को भेंट कर देवे स्वयं यजमान उपवास करे ॥ २ ॥ प्रातः काल अष्टमी के दिन ब्राह्मणों को घर में बुला कर आज्यभाग पर्यन्त कर्म करके पूर्वाभिमुख खड़ी गौ का (पितृभ्यस्त्वा जुष्टा०) मन्त्र पढ़ के कुश से उपाकरण स्पर्श करे ॥ ३ ॥ फिर तूष्णीं बिना मन्त्र पढ़े प्रजापति के नाम से पांच आहुति घी की देवे फिर उसकी वपा को पकाकर उपस्तार अभिघार करके खं० १३ सू० १६ में कहे अनुसार (वह वपां०) मन्त्र पढ़के होम करे ॥ ४ ॥ (यां जनाः प्रतिनन्दन्ति०) इत्यादि सात मन्त्रों से मांसौदन का होम करे ॥ ५ ॥ फिर पिसे चौके आटा के बड़ा को दूध में पकाये हों उनका (उक्थ्यश्च०) मन्त्र पढ़के होम करे ॥ ६ ॥ फि-

आज्याहुतीरुत्तराः ॥ ७ ॥ स्विष्टकृत्प्रभृतिसमानमापिण्ड निधानात् ॥ ८ ॥ अन्वष्टकायामेवैके पिण्डनिधानमुप दिशन्ति ॥ ९ ॥ अथैतदपरं दध्नएवाञ्जलिना जुहोति यथापूपम् ॥ १० ॥ अतएव यथार्थं मांसं शिष्ट्वा श्वोभूतेऽन्वष्टका ॥ ११ ॥ तस्या मासिश्राद्धेन कल्पो व्याख्यातः ॥ १२ ॥ सनिमित्तोत्तरां जपित्वार्थं ब्रूयात् ॥ १३ ॥ रथं लब्ध्वा योजयित्वा प्राञ्चमवस्थाप्योत्तरया रथचक्रेऽभिमृशति पक्षसी वा ॥ १४ ॥ उत्तरेण यजुषाधिरुह्योत्तरया प्राचीमुदीचीं वा दिशमभिप्रयाय यथार्थं यायात् ॥ १५ ॥

र (भूः पृथिव्यग्निना०) इत्यादि आठ मन्त्रों से घी की आठ आहुति करे ॥ ७ ॥ फिर स्विष्टकृत् आहुति से लेकर अर्थात् मांसौदन और पिष्ट से स्विष्टकृत् होम करे फिर जयादि होम की ५८ आहुति करके ब्राह्मणों को बैठाने से लेकर एकग्रास खाने तक खं० २१ सू० ६ से ९ तक में कहे अनुसार करे ॥ ८ ॥ यहां कहा पिण्ड स्थापन कर्म कोई आचार्य आगे कहे अन्वष्टका कर्म में करना कहते हैं यहां नहीं ॥ ९ ॥ अब इस के बाद (यां जना०) मन्त्र से अपूपों के तुल्य दोनों हाथ की अंजुली में भरके दही की एक आहुति करे ॥१०॥ इसी लिये यावत्प्रयोजन मांस को बचाके अगले दिन प्रातः काल अन्वष्टका कर्म करे ॥ ११ ॥ इस अन्वष्टका कर्म का सब कृत्य खं० २१ सू०२ से ९ तक में कहे अनुसार करे ॥१२॥ दान लेने के लिये दाता के पास जाकर जिस के लिये आया है उस प्रयोजन सहित (अजनिष ते दूर्गे०) इत्यादि मन्त्रों का जप करके उन मन्त्रों का अर्थ सुनावे । सातवें मन्त्र के (असौ) पद के स्थान में दाता का संबोधनान्त नाम बोले ॥ १३ ॥ दाता से रथ लेके उस में घोड़े वा बैल जोड़ कर पूर्वाभिमुख खड़ा करके (अङ्कौन्यङ्कौ०) मन्त्र पढ़ के रथके पहिये वा ईषा नाम हर्षों का स्पर्श करे पहिले दहिने का फिर बांयें का ॥१४॥ फिर (अश्वनामश्वपते०) मन्त्र से रथ पर चढ़ के (अयं वामश्विनारथः०) मन्त्र पढ़के पूर्व वा उत्तर को चल कर फिर यथेष्ट अपने स्थान को जावे ॥१५॥

अश्वमुत्तरेणारोहेत् ॥ १६ ॥ हस्तिनमुत्तरया ॥ १७ ॥ ताभ्यां रेषणे पूर्ववत्पृथिवीमभिमृशेत् ॥ १८ ॥ संवादमेष्यन्सव्येन पाणिना छत्रं दण्डं चाददत्ते ॥ १९ ॥

इति द्वाविंशः खण्डः ॥

दक्षिणेन फलीकरणमुष्टिमुत्तरया हुत्वा गत्वोत्तरां जपेत्॥१॥ क्रुद्धमुत्तराभ्यामभिमन्त्रयेत विक्रोधो भवति॥२॥असंभवेप्सुः परेषां स्थूलाढारिकाजीवच्चूर्णानि कारयित्वोत्तरया सुप्तायाः संबाध उपवपेत् ॥३॥सिद्ध्यर्थे बभ्रूमूत्रेण प्रक्षालयीत

यदि दाता ने घोड़ा दिया हो तो (अश्वोऽसि हयोऽसि०) इत्यादि ग्यारह मन्त्र पढ़ के उस पर चढ़े ॥ १६ ॥ यदि दाता ने हाथी दिया हो तो (हस्तियशसमसि०) मन्त्र पढ़के उसपर चढ़े और (असौ) के स्थान में ऐरावत ऐसा नाम बोले ॥ १७ ॥ उन घोड़ा वा हाथी से गिर जावे तो (स्योनापृथिवी०) इत्यादि दो मन्त्रों से पृथिवी का स्पर्श करे ॥ १८ ॥ ऋण लेन देन के व्यवहार में शुभेच्छु विजय चाहता हुआ वाम हाथ से छाता और दण्ड का ग्रहण करे ॥ १९ ॥ यह बाईशवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—फिर दहिने हाथ से भूसी की मुट्ठी भर के (अवजिह्वका०) इस मन्त्र से होम करे (असौ) पदके स्थान में व्यहार के प्रतिपक्षी का नाम लेवे यह संवाद होम अपूर्व है इस में अग्नि का प्रज्वालन परिस्तरण और पर्युक्षण होम से पहिले कर लेवे फिर संवाद स्थान में जाके प्रतिपक्षी को देख के (अतिवाचम्०) मन्त्र का जप करे यहां भी (असौ) के स्थान में शत्रु का संबोधनान्त नाम लेवे ॥ १ ॥ यदि उस को देख के शत्रु क्रुद्ध हो और क्रोध की शान्ति चाहता हो तो क्रुद्ध की ओर देखता हुआ (यातएष०) इत्यादि दो मन्त्र पढ़े क्रोध शान्त होगा ॥२॥ यदि अपने विदेश जाने आदि अवसर में अपनी स्त्री से अन्यों के व्यभिचार करने की शंका हो और चाहता है कि कोई ऐसा न करे तो वन के स्थूलाढारिका नामक ओषधि का चूर्ण कराके (अवज्यामिव०) मन्त्र पढ़ के लेटी हुई पत्नी के उपस्थ स्थान पर थोड़ा छोड़ देवे ॥३॥ फिर जब स्वयं स्त्री से प्रसंग करना चाहे तो कपिल वर्णा-

॥ ४ ॥ सिद्ध्यर्थे यदस्य गृहे पण्यं स्यात्तत उत्तरया जुहुयात् ॥५॥ यं कामयेत नायं मच्छिद्येतेति जीवविषाणे स्वं मूत्रमानीय सुप्तमुत्तराभ्यां त्रिःप्रसव्यं परिषिञ्चेत् ॥६॥ येन पथा दासकर्मकराः पलायेरंस्तस्मिन्निण्ड्वान्युपसमाधायोत्तरा आहुतीर्जुहुयात ॥ ७ ॥ यद्येनं वृक्षात्फलमभिनिपतेद्वयो वाभिविक्षिपेतावर्षतक्ये वा बिन्दुरभिनिपतेत्तदुत्तरैर्यथालिङ्गं प्रक्षालयीत ॥ ८ ॥ अगारस्थूणाविरोहणे मधुनउपवेशने कूपत्वां कपोतपदद्दर्शनेऽमात्यानां शरीरेषणेऽन्येषु चाद्भु-

गौके मूत्र से पती के उपस्थ भाग को धो देवे । प्रयोजन यह कि सू० ३ में कहे यत्न से स्त्री संग योग्य नहीं रहती है ॥ ४ ॥ इस के घर में जो बेचने योग्य वस्तु हो उस के विक्रय सिद्धि के लिये उस में से थोड़ा वस्तु लेकर (यदहंधनेन०) मन्त्र से औपासनाग्नि में होम कर देवे चाहे वह वस्तु क्षार लवणादि भले ही हो ॥ ५ ॥ जिस भृत्यादि को चाहता हो कि यह मुझ से अलग न हो तो जीते बैल का पड़ा हुआ सींग उठा के उस में अपना मूत्र लाकर सोते हुए भृत्यादि के सब ओर तीन वार अप्रदक्षिण (परित्वागिरेरमिह०) इत्यादि दो मन्त्रों से सेचन कर देवे ॥ ६ ॥ जिस मार्ग से दास कर्म करने वाले सेवक भाग गये हों उसी मार्ग में लकड़ी के निगड़ वा इण्वड़ों को प्रज्वलित करके (आवर्त्तनवर्त्तय०) इत्यादि मन्त्रों से चार आहुति देवे ॥ ७ ॥ यदि इस के शरीर पर अकस्माद्वृक्ष से फल गिरे अथवा अकस्मात् कोई पक्षी इस पर पंख हिलावे अथवा बद्दल न होने पर भी अकस्मात् आकाश से बिन्दु गिरे तो (यदि वृक्षात्०) फल गिरने पर (ये पक्षिणः०) पक्षी का वायु लगने पर तथा बिन्दु गिरने पर (दिवोऽनुमावृहतः) मन्त्र से अपने शरीर को धोडाले ॥ ८ ॥ जो स्वभाव से न होते हों फिर किसी समय अकस्मात् विना ही कारण विना ही समय हों उन को अद्भुत कहते और अव्यक्तावस्था आकाश में होने वाले आश्चर्य जनक कार्य उत्पात कहाते हैं जैसे घर की थूनी वा खम्भ में अङ्कुर निकल आना घर के भीतर मौहार

तोत्पातेष्वमावास्यायां निशायां यत्रापां न शृणुयात्तदग्ने-रुपसमाधानाद्याज्यभागान्त उत्तरा आहुतीर्हुत्वा जयादि-प्रतिपद्यते ॥ ९ ॥ परिषेचनान्तं कृत्वाभिमृतेभ्य उत्तरया दक्षिणतोऽश्मानं परिधिं दधाति दधाति ॥ १० ॥ इति त्रयो-विंशः खण्डः इत्यष्टमः पटलः समाप्तः॥समाप्तश्चायंग्रन्थः॥

(मधुमक्खियों) का बैठना, चूल्हे में कबूतर का पग दीख पड़े, स्त्री पुत्र भृत्या दि को एक साथ रोग घेर लेवे वा कोई मर जावे इत्यादि अद्भुतों में तथा इन्द्र धनु दर्शनादि उत्पातों में अमावास्या के दिन चार घड़ी रात जाने पर जिस स्थान नाम कमरा में बाहर से आने वाले जल भरे घड़ों का शब्द न सुन पड़े वहां अग्नि का प्रज्वालन कर आज्यभाग पर्यन्त कृत्य कर लेने पर (इमं मे वरुण०) इत्यादि दश आहुति घृतकी करके जयादि होम की ५८ आ-हुति करे ॥ ९ ॥ परिषेचन पर्यन्त कर्म करके जो अति बीमार हुए मृतप्राय हो रहे हों उन को मृत्यु से बचाने के लिये (इमं जीवेभ्यः परिधिं०) मन्त्र प-ढ़ के घर से दक्षिण दिशा में एक पत्थर की परिधि रक्खे कि अब इस हद्द से आगे मृत्यु न बढ़े ॥ १० ॥ यहां सूत्रकार आचार्य ने दधाति शब्द को ग्रन्थ समाप्ति दिखाने के लिये द्विवारा पढ़ा है । यह तेईशवां खण्ड और आठवां पटल समाप्त हुआ ।

इति ब्राह्मणसर्वस्वमासिकपत्रसम्पादकभीमसेनशर्म निर्मितभाषावृत्तियुतं समाप्तमापस्तम्बीयं गृह्यसूत्रम् ॥

अथ शुद्धिपत्रम् ।

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१७	नाम पो	नाम प्रो
३	१९	सूत्र में	इस सूत्र में
३।५।७	हेडिंग	आपस्तबीयम् ।	आपस्तम्बीयम् ।
८	२	बेक्षते	वक्षते
८	१०	कर्मकण्ड	कर्मकाण्ड
९	४	युरमतस	युष्मान्स
९	७	हुंहतेन	ऽहुतेन
९	२२	इत्यादि	इत्यादि
१०	४	दक्षिणामु	दक्षिणामु
१०	५	ट्यक्कुली	ट्यक्कुली
११	१६	इधूको	वधूको
१२	२	मग्ने	मग्रे
१४	२२	(पा ओषधय०)	(या ओषधय०)
१५	३	पदाः	पद्मा
१६	१	निरक्रम्यो	निष्क्रम्यो
१६	५	प्रचीनमुदीनं	प्राचीनमुदीचीनं
१९	१	प्रसायते	प्रक्षायते
१९	४	वुत्तरायां	वुत्तराभ्यां
१९	२७	कनाश्री:०	कमाश्री:०
२४	५	वयन्त	वपन्त
२४	१५	क्षुरे	क्षुरे से
२६	२५	मन्त्र मी	मन्त्र भी
२९	७	मौ समिध	मौं समिध
२९	८	सरे यजुषा	सरेण यजुषा
३१	४	ताभिः	ताभिः सप्ये
३१	५	ज्जनसा	ज्ञुनसा
३२	२	तूपीमेव	तूष्णीमेव

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३२	१०	पुस्ता	पुरस्ता
३७	२१	वीरे से	धीरे से
३८	१६	स्वाहार	स्वाहाकार
४०	२६	चडाकर्म	चूडाकर्म
४५	४	रोशोर	रो शोर
५१	२	पूर्वदुत्त	पूर्वपदुत्त
२	६	श्रा कृति	कृति
३	९	शस्या प	शस्याः प
४	७	न्त्राष्टभूतः	त्राष्टभूतः
७	२	कार्रो	कार्रो च
११	३	न विद्दे	निविद्दे
१२	५	समाप्य	समोप्य
२८	३	गुरुवे	गुरुवे
२८	६	॥ २६ ॥	॥ २० ॥
३१	३	साभिरेवा	साभिरेव
३२	६	पादं श्रा०	पादं पूर्वं श्रा०